REG. NO. RAJHIN/2002/14707

उत्तमा वृत्तिस्तु कृषिकर्मैव

# चोखी खेती

सितम्बर, 2026

## विकसित भारत-2047 की परिकल्पना : पशुधन, पशु चिकित्सा एवं सतत् ग्रामीण विकास की नई दिशा

**सोनम कुमारी मीना[1], हर्षवर्धन सिंह पुरावत[2] एवं संजय[3]**

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ कृषि के साथ–साथ पशुपालन ग्रामीण अर्थव्यवस्था की रीढ़ माना जाता है। देश की लगभग 65 प्रतिशत ग्रामीण आबादी प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से पशुधन पर निर्भर है। दूध, मांस, अंडा, ऊन, चमड़ा तथा अन्य पशु उत्पाद न केवल पोषण सुरक्षा प्रदान करते हैं, बल्कि करोड़ों लोगों की आजीविका का प्रमुख स्रोत भी हैं। भारत विश्व का सबसे बड़ा दुग्ध उत्पादक देश है तथा पशुधन क्षेत्र कृषि सकल मूल्य संवर्धन (Agricultural Gross Value Added) में महत्वपूर्ण योगदान देता है।

भारत सरकार ने वर्ष 2047 तक देश को विकसित राष्ट्र बनाने का लक्ष्य निर्धारित किया है। इस लक्ष्य की प्राप्ति में पशुधन क्षेत्र तथा पशु चिकित्सकों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होगी। आधुनिक पशुपालन, उन्नत पशु स्वास्थ्य सेवाएँ, डिजिटल तकनीकों का उपयोग, जैव सुरक्षा, जैविक पशुपालन तथा वैज्ञानिक अनुसंधान विकसित भारत के निर्माण की आधारशिला बनेंगे। पशु चिकित्सक केवल पशुओं के चिकित्सक ही नहीं, बल्कि सार्वजनिक स्वास्थ्य विशेषज्ञ, वैज्ञानिक, शिक्षक, शोधकर्ता, उद्यमिता मार्गदर्शक तथा ग्रामीण विकास के प्रमुख स्तंभ भी हैं।

वर्तमान समय में पशु चिकित्सकों की भूमिका केवल पशुओं के उपचार तक सीमित नहीं रह गई है। वे **"वन हेल्थ (One Health)"** की अवधारणा के अंतर्गत मानव, पशु एवं पर्यावरण स्वास्थ्य के मध्य समन्वय स्थापित करने का कार्य कर रहे हैं। पशु चिकित्सक जूनोटिक रोगों की रोकथाम, खाद्य सुरक्षा, जैव–सुरक्षा, पशु कल्याण, एंटीमाइक्रोबियल प्रतिरोध (AMR) की रोकथाम तथा सुरक्षित पशु उत्पादों की उपलब्धता सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं। कोविड–19 जैसी वैश्विक महामारी ने यह सिद्ध कर दिया है कि पशु एवं मानव स्वास्थ्य एक–दूसरे से गहराई से जुड़े हुए हैं।

### ❖भारत में पशुधन क्षेत्र का महत्त्व

**• सकल घरेलू उत्पाद (GDP/GVA) में योगदान**

पशुधन क्षेत्र भारत की अर्थव्यवस्था का एक प्रमुख आधार बन चुका है। वर्ष 2023–24 में यह क्षेत्र राष्ट्रीय सकल मूल्य संवर्धन (GVA) का लगभग 5.5 प्रतिशत तथा कृषि एवं संबद्ध क्षेत्र के सकल मूल्य वर्द्धन का लगभग 30.87 प्रतिशत योगदान देता है। वर्ष 2014–15 से 2023–24 के बीच पशुधन क्षेत्र ने 12.77 प्रतिशत की चक्रवृद्धि वार्षिक वृद्धि दर दर्ज की है।

**• रोजगार सृजन**

भारत में पशुधन क्षेत्र लगभग 8.8 प्रतिशत जनसंख्या को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार उपलब्ध कराता है। यह विशेष रूप से छोटे एवं सीमांत किसानों, भूमिहीन परिवारों तथा ग्रामीण महिलाओं के लिए आय का प्रमुख स्रोत है।

**• पोषण सुरक्षा**

पशुधन क्षेत्र दूध, अंडे, मांस तथा अन्य उच्च गुणवत्ता वाले प्रोटीनयुक्त खाद्य

1 पीएच.डी. स्कॉलर, 2 पीएच.डी. स्कॉलर, 3 स्नातकोत्तर उत्तीर्ण छात्र, पशुधन उत्पादन एंव प्रबंधन विभाग, कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर

पदार्थ उपलब्ध कराकर देश की पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करता है। भारत विश्व का सबसे बड़ा दुग्ध उत्पादक, दूसरा सबसे बड़ा अंडा उत्पादक तथा चौथा सबसे बड़ा मांस उत्पादक देश है। डेयरी क्षेत्र पशुधन उत्पादन के कुल मूल्य में सर्वाधिक योगदान देता है।

- **सतत विकास एवं जलवायु अनुकूल कृषि**

पशुधन क्षेत्र जैविक खाद, गोबर गैस तथा कृषि अपशिष्टों के पुनर्चक्रण के माध्यम से मृदा की उर्वरता बनाए रखने में सहायता करता है। एकीकृत फसल–पशुधन प्रणाली जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने तथा टिकाऊ कृषि को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

- **निर्यात एवं विदेशी मुद्रा अर्जन**

वर्ष 2024–25 में भारत से पशुधन एवं पशु उत्पादों का कुल निर्यात बढ़कर लगभग 66,249 करोड़ रुपये तक पहुँच गया। इसमें भैंस का मांस, डेयरी उत्पाद, पोल्ट्री उत्पाद तथा अन्य पशु उत्पादों का महत्वपूर्ण योगदान रहा, जिससे देश की विदेशी मुद्रा आय में उल्लेखनीय वृद्धि हुई।

- **गरीबी उन्मूलन एवं महिला सशक्तिकरण**

पशुपालन ग्रामीण अर्थव्यवस्था में गरीबी उन्मूलन का प्रभावी साधन है। देश की 50 प्रतिशत से अधिक ग्रामीण महिलाएँ पशुपालन एवं डेयरी गतिविधियों से जुड़ी हुई हैं, जिससे उनकी आय, आत्मनिर्भरता तथा सामाजिक–आर्थिक स्थिति में सुधार हो रहा है।

- **सामाजिक एवं सांस्कृतिक महत्त्व**

भारत में पशुधन का धार्मिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक महत्त्व भी अत्यधिक है। विशेषकर राजस्थान, गुजरात, हरियाणा एवं उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में पशुधन ग्रामीण संस्कृति, पारंपरिक मेलों तथा धार्मिक आयोजनों का अभिन्न अंग है।

## ❖भारत में पशुधन क्षेत्र की प्रमुख चुनौतियाँ (2026)

- **कम उत्पादकता**

भारत पशुधन संख्या में विश्व में अग्रणी होने के बावजूद प्रति पशु उत्पादकता विकसित देशों की तुलना में अभी भी कम है। दूध उत्पादन प्रति पशु अभी भी अनेक विकसित देशों के औसत से कम है। इसलिए उत्पादकता बढ़ाने के लिए उन्नत नस्ल सुधार, संतुलित पोषण तथा आधुनिक प्रबंधन तकनीकों को अपनाना आवश्यक है।

- **अपर्याप्त आधारभूत संरचना**

पशु चिकित्सालयों, आधुनिक निदान प्रयोगशालाओं, कोल्ड चेन, दुग्ध संग्रहण केन्द्रों, आधुनिक बूचड़खानों तथा गुणवत्तापूर्ण चारा उत्पादन सुविधाओं की कमी आज भी एक बड़ी चुनौती बनी हुई है। इससे उत्पादों की गुणवत्ता प्रभावित होती है तथा किसानों की बाजार तक पहुँच सीमित रहती है।

- **जलवायु परिवर्तन एवं पर्यावरणीय प्रभाव**

बढ़ता तापमान, अनियमित वर्षा, सूखा तथा चारे की कमी पशुधन उत्पादकता को प्रभावित कर रहे हैं। दूसरी ओर, पशुपालन से मीथेन गैस का उत्सर्जन भी जलवायु परिवर्तन की चुनौती को बढ़ाता है। इसलिए जलवायु–स्मार्ट पशुपालन को बढ़ावा देना आवश्यक हो गया है।

- **पशु स्वास्थ्य एवं जूनोटिक रोग**

खुरपका–मुँहपका रोग (FMD), ब्रूसेलोसिस, लम्पी स्किन डिजीज (LSD), एवियन इन्फ्लुएंजा तथा रेबीज जैसे रोग पशुधन एवं सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए गंभीर चुनौती बने हुए हैं। लगभग 60 प्रतिशत संक्रामक रोग तथा 75 प्रतिशत उभरते संक्रामक रोग पशुओं से मनुष्यों में फैलने वाले जूनोटिक रोग होते हैं। इसलिए ''वन हेल्थ'' दृष्टिकोण को प्रभावी रूप से लागू करना आवश्यक है।

- **पशु चिकित्सकों की कमी**

पशुपालन एवं डेयरी विभाग के अनुसार देश में बढ़ती पशुधन आबादी तथा पशु स्वास्थ्य सेवाओं की मांग को देखते हुए अधिक पशु चिकित्सकों, पैरा–वेट कर्मियों तथा आधुनिक पशु चिकित्सा अवसंरचना की आवश्यकता है। इस दिशा में सरकार नए पशु चिकित्सा महाविद्यालयों की स्थापना, डिजिटल पशु स्वास्थ्य सेवाओं तथा कौशल विकास कार्यक्रमों को बढ़ावा दे रही है।

- **विकसित भारत–2047 में पशुधन क्षेत्र का महत्व**

भारत की अर्थव्यवस्था में पशुधन क्षेत्र का योगदान निरंतर बढ़ रहा है। यह क्षेत्र लगभग 8.8 प्रतिशत जनसंख्या को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रोजगार उपलब्ध कराता है। छोटे एवं सीमांत किसानों की कुल आय का लगभग 16 प्रतिशत तथा ग्रामीण परिवारों की आय का लगभग 14 प्रतिशत भाग पशुपालन से प्राप्त होता है। पशुधन क्षेत्र किसानों को नियमित नकद आय उपलब्ध कराता है तथा प्राकृतिक आपदाओं के समय आर्थिक सुरक्षा प्रदान करता है।

पशुधन क्षेत्र का महत्व निम्नलिखित बिंदुओं से स्पष्ट होता है–

- ग्रामीण रोजगार एवं स्वरोजगार का प्रमुख स्रोत।
- दुग्ध, मांस, अंडा एवं अन्य पशु उत्पादों द्वारा पोषण सुरक्षा।
- जैविक खाद एवं गोबर गैस उत्पादन के माध्यम से सतत कृषि

को बढ़ावा।

- महिला सशक्तिकरण एवं ग्रामीण उद्यमिता का विकास।
- निर्यात एवं विदेशी मुद्रा अर्जन में योगदान।
- जलवायु अनुकूल एवं टिकाऊ कृषि प्रणाली को प्रोत्साहन।

राष्ट्रीय पशुधन मिशन (National Livestock Mission) के संशोधित स्वरूप में पशुपालन आधारित उद्यमिता, उत्पादकता वृद्धि, गुणवत्तापूर्ण नस्ल सुधार, चारा विकास, डेयरी, बकरी पालन, भेड़ पालन, कुक्कुट पालन तथा पशु स्वास्थ्य सेवाओं के विस्तार पर विशेष बल दिया गया है।

### ❖ विकसित भारत–2047 में पशु चिकित्सकों की भूमिका

पशु चिकित्सक आधुनिक भारत के विकास में बहुआयामी भूमिका निभाते हैं। वे सरकारी सेवाओं, विश्वविद्यालयों, अनुसंधान संस्थानों, फार्मा उद्योगों, निजी अस्पतालों, गौशालाओं, स्वयंसेवी संस्थाओं तथा अंतरराष्ट्रीय संगठनों में अपनी सेवाएँ प्रदान कर रहे हैं।

**1. पशु स्वास्थ्य संरक्षण**

पशु चिकित्सकों का प्रमुख कार्य पशुओं की बीमारियों की रोकथाम, समय पर निदान एवं प्रभावी उपचार करना है। नियमित टीकाकरण, कृमिनाशन, स्वास्थ्य परीक्षण तथा रोग नियंत्रण कार्यक्रमों के माध्यम से पशुधन की उत्पादकता बढ़ाई जाती है।

**2. जूनोटिक रोगों की रोकथाम**

रेबीज, ब्रुसेलोसिस, एवियन इन्फ्लुएंजा, स्वाइन फ्लू तथा कोरोना जैसे अनेक रोग पशुओं से मनुष्यों में फैल सकते हैं। पशु चिकित्सक **One Health Concept** के अंतर्गत मानव, पशु एवं पर्यावरण स्वास्थ्य के समन्वय द्वारा इन रोगों की रोकथाम में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

**3. खाद्य सुरक्षा एवं गुणवत्ता नियंत्रण**

दूध, मांस एवं अंडों की गुणवत्ता सुनिश्चित करना पशु चिकित्सकों की महत्वपूर्ण जिम्मेदारी है। वे पशु उत्पादों में मिलावट, रोगजनकों एवं एंटीबायोटिक अवशेषों की निगरानी करते हैं, जिससे उपभोक्ताओं को सुरक्षित एवं गुणवत्तापूर्ण खाद्य सामग्री उपलब्ध हो सके।

**4. नस्ल सुधार एवं उत्पादकता वृद्धि**

उन्नत नस्लों के विकास, कृत्रिम गर्भाधान (Artificial Insemination), भ्रूण प्रत्यारोपण (Embryo Transfer Technology) तथा आनुवंशिक सुधार कार्यक्रमों के माध्यम से पशु चिकित्सक दुग्ध, मांस एवं अंडा उत्पादन बढ़ाने में योगदान देते हैं।

**5. जैविक पशुपालन एवं सतत विकास**

जैविक पशुपालन में रासायनिक दवाओं एवं एंटीबायोटिक के सीमित उपयोग, प्राकृतिक आहार, जैव सुरक्षा तथा पशु कल्याण के सिद्धांतों का पालन किया जाता है। पशु चिकित्सक किसानों को जैविक पशुपालन अपनाने हेतु प्रशिक्षण एवं तकनीकी मार्गदर्शन प्रदान करते हैं।

### ❖ डिजिटल भारत और पशु चिकित्सा का भविष्य–

डिजिटल तकनीकों के विकास ने पशु चिकित्सा सेवाओं को नई दिशा प्रदान की है। विकसित भारत–2047 के लक्ष्य को प्राप्त करने में निम्न आधुनिक तकनीकों की महत्वपूर्ण भूमिका होगी–

**टेलीमेडिसिन**

दूरस्थ क्षेत्रों में रहने वाले पशुपालकों को मोबाइल एवं इंटरनेट के माध्यम से विशेषज्ञ परामर्श उपलब्ध कराया जा सकता है। इससे समय, लागत तथा संसाधनों की बचत होती है।

**कृत्रिम बुद्धिमत्ता**

AI आधारित तकनीकों द्वारा पशुओं में रोगों का प्रारंभिक निदान, दुग्ध उत्पादन का पूर्वानुमान, व्यवहार विश्लेषण, प्रजनन प्रबंधन तथा स्वास्थ्य निगरानी अधिक सटीक रूप से की जा सकती है।

**मशीन लर्निंग एवं बिग डेटा**

रोगों के प्रसार का विश्लेषण, महामारी का पूर्वानुमान, उत्पादन रिकॉर्ड का मूल्यांकन तथा प्रबंधन संबंधी निर्णय लेने में मशीन लर्निंग अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो रही है।

**डेटा एनालिटिक्स**

रोग निगरानी प्रणाली के माध्यम से जूनोटिक रोगों का समय रहते पता लगाया जा सकता है तथा उनके प्रसार को रोका जा सकता है।

**अंतरराष्ट्रीय सहयोग**

विश्व पशु स्वास्थ्य संगठन (WOAH), FAO तथा WHO जैसी संस्थाओं के सहयोग से रोग नियंत्रण, अनुसंधान एवं नई तकनीकों का आदान–प्रदान संभव हो रहा है, जिससे भारत वैश्विक पशु स्वास्थ्य व्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान दे सकता है।

**रोग–मुक्त भारत अभियान**

**वर्ष 2047 तक "रोग मुक्त भारत मिशन"** के अंतर्गत खुरपका–मुँहपका रोग, ब्रुसेलोसिस, लम्पी स्किन डिजीज, रेबीज तथा अन्य संक्रामक रोगों के प्रभावी नियंत्रण एवं उन्मूलन का लक्ष्य निर्धारित किया जाना चाहिए। इसके लिए नियमित टीकाकरण, रोग निगरानी प्रणाली, जैव सुरक्षा उपाय तथा "**वन हेल्थ**" दृष्टिकोण को सुदृढ़

बनाना आवश्यक होगा।

**प्रत्येक गाँव में डिजिटल पशु स्वास्थ्य सेवा**

प्रत्येक गाँव में डिजिटल पशु स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार किया जाना चाहिए, जिससे पशुपालकों को मोबाइल एप, ऑनलाइन परामर्श, डिजिटल स्वास्थ्य रिकॉर्ड तथा विशेषज्ञ चिकित्सकीय सलाह समय पर उपलब्ध हो सके। इससे दूरस्थ क्षेत्रों के पशुपालकों को भी गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ्य सेवाएँ प्राप्त होंगी।

**महिला नेतृत्व आधारित पशुधन उद्यमिता**

ग्रामीण महिलाओं, स्वयं सहायता समूहों तथा किसान उत्पादक संगठनों को डेयरी, बकरी पालन, भेड़ पालन, कुक्कुट पालन तथा मूल्य संवर्धन आधारित पशुधन उद्यमों से जोड़कर महिला सशक्तिकरण एवं ग्रामीण आत्मनिर्भरता को बढ़ावा दिया जा सकता है।

**पशु चिकित्सा अनुसंधान एवं नवाचार की भूमिका**

वर्तमान समय में पशु चिकित्सा अनुसंधान अत्यधिक उन्नत हो चुका है। जीनोमिक्स, बायोटेक्नोलॉजी, वैक्सीन विकास, स्टेम सेल थेरेपी तथा आणविक निदान तकनीकों ने पशु चिकित्सा विज्ञान को नई ऊँचाइयों तक पहुँचाया है।

**जैविक पशुधन क्लस्टरों का विकास**

जैविक पशुधन क्लस्टरों का विकास कर प्राकृतिक पशुपालन, जैविक आहार, जैविक खाद तथा प्रमाणित जैविक पशु उत्पादों के उत्पादन को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। इससे पर्यावरण संरक्षण के साथ–साथ निर्यात की संभावनाएँ भी बढ़ेंगी।

यदि इन सभी रणनीतियों को प्रभावी ढंग से लागू किया जाए, तो वर्ष 2047 तक भारत न केवल पशुधन उत्पादन में विश्व के अग्रणी देशों में अपनी स्थिति और अधिक मजबूत करेगा, बल्कि सतत् ग्रामीण विकास, पोषण सुरक्षा, महिला सशक्तिकरण, पर्यावरण संरक्षण तथा आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था के लक्ष्य को भी सफलतापूर्वक प्राप्त करेगा। विकसित भारत–2047 की परिकल्पना में पशुधन एवं पशु चिकित्सा क्षेत्र एक सशक्त, आधुनिक, नवाचार आधारित और समावेशी विकास मॉडल के रूप में उभरेंगे।

पशु चिकित्सक निम्न क्षेत्रों में अनुसंधान कर रहे हैं–

- नई एवं प्रभावी वैक्सीन का विकास।
- रोग प्रतिरोधी नस्लों का विकास।
- एंटीमाइक्रोबियल रेजिस्टेंस पर अनुसंधान।
- जैव चिकित्सा अनुसंधान।
- पर्यावरण–अनुकूल पशुपालन प्रणाली।
- पशु कल्याण एवं व्यवहार विज्ञान।

इन अनुसंधानों से प्राप्त निष्कर्ष केवल पशुओं के लिए ही नहीं, बल्कि मानव चिकित्सा एवं सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए भी अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो रहे हैं।

### ❖ भविष्य की चुनौतियाँ

विकसित भारत–2047 के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए पशुधन क्षेत्र को अनेक चुनौतियों का सामना करना होगा–

- जलवायु परिवर्तन का पशुधन पर प्रभाव।
- उभरते एवं पुनः उभरते जूनोटिक रोग।
- एंटीबायोटिक प्रतिरोध।
- गुणवत्तापूर्ण पशु चारे की उपलब्धता।
- पशुपालकों में वैज्ञानिक जागरूकता की कमी।
- डिजिटल तकनीकों का सीमित उपयोग।
- पशु चिकित्सकों एवं आधुनिक पशु चिकित्सा सुविधाओं की कमी।

इन चुनौतियों का समाधान वैज्ञानिक अनुसंधान, डिजिटल तकनीक, प्रभावी सरकारी नीतियों तथा प्रशिक्षित पशु चिकित्सकों के माध्यम से ही संभव है।

### ❖ निष्कर्ष

विकसित भारत–2047 के निर्माण में पशुधन क्षेत्र और पशु चिकित्सकों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण एवं बहुआयामी है। पशु चिकित्सक केवल पशुओं का उपचार करने तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे सार्वजनिक स्वास्थ्य, खाद्य सुरक्षा, जैविक खेती, ग्रामीण विकास, उद्यमिता, अनुसंधान, पर्यावरण संरक्षण तथा डिजिटल स्वास्थ्य सेवाओं के प्रमुख आधार हैं।

भविष्य में कृत्रिम बुद्धिमत्ता, टेलीमेडिसिन, मशीन लर्निंग, जैव प्रौद्योगिकी तथा डेटा विश्लेषण जैसी आधुनिक तकनीकों के समुचित उपयोग से पशु चिकित्सा सेवाएँ और अधिक प्रभावी बनेंगी। यदि सरकार, वैज्ञानिक संस्थान, पशु चिकित्सक तथा पशुपालक मिलकर कार्य करें, तो भारत न केवल पशुधन उत्पादन में विश्व नेतृत्व बनाए रखेगा, बल्कि वर्ष 2047 तक एक समृद्ध, आत्मनिर्भर एवं विकसित राष्ट्र बनने के लक्ष्य को भी सफलतापूर्वक प्राप्त करेगा। अतः यह कहना उचित होगा कि विकसित भारत–2047 की परिकल्पना में पशु चिकित्सक एवं पशुधन क्षेत्र राष्ट्र निर्माण के सशक्त स्तंभ सिद्ध होंगे।

# पादप रोगों में नई तकनीकें : आधुनिक कृषि सुरक्षा की दिशा में एक क्रांतिकारी कदम

सुमेर सिंह[1], सुनील कुमार शर्मा[2]

**भूमिका:**

कृषि मानव सभ्यता का आधार है और खाद्य सुरक्षा का सबसे महत्वपूर्ण स्रोत भी। विश्व की बढ़ती जनसंख्या के साथ खाद्यान्न उत्पादन बढ़ाने की आवश्यकता लगातार बढ़ रही है, लेकिन पादप रोग इस लक्ष्य को प्राप्त करने में एक बड़ी बाधा के रूप में सामने आते हैं। विभिन्न प्रकार के फफूंद, जीवाणु, विषाणु, फाइटोप्लाज्मा, निमेटोड तथा अन्य रोगजनक प्रतिवर्ष फसलों को भारी नुकसान पहुँचाते हैं। इन रोगों के कारण न केवल उपज में कमी आती है, बल्कि उत्पाद की गुणवत्ता भी प्रभावित होती है। जलवायु परिवर्तन, अनियमित वर्षा, बढ़ता तापमान तथा अंतरराष्ट्रीय व्यापार के कारण नए रोगों का प्रसार तेजी से हो रहा है। ऐसी परिस्थितियों में केवल पारंपरिक रोग नियंत्रण विधियाँ पर्याप्त नहीं रह गई हैं। इसलिए पादप रोगों की पहचान, निगरानी, पूर्वानुमान तथा नियंत्रण के लिए आधुनिक तकनीकों का उपयोग तेजी से बढ़ रहा है। वर्तमान समय में आणविक जीवविज्ञान, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, जीन संपादन, रिमोट सेंसिंग, नैनो प्रौद्योगिकी तथा डिजिटल कृषि जैसी तकनीकें पादप रोग प्रबंधन में क्रांतिकारी परिवर्तन ला रही हैं। इन तकनीकों ने रोगों के निदान को अधिक सटीक, तेज और प्रभावी बनाया है तथा किसानों को समय पर उचित निर्णय लेने में सहायता प्रदान की है।

**पादप रोगों के निदान में आणविक तकनीकें:**

पादप रोगों के प्रभावी नियंत्रण की पहली शर्त रोग की सही और समय पर पहचान है। पहले रोगों की पहचान मुख्य रूप से बाहरी लक्षणों तथा प्रयोगशाला परीक्षणों के आधार पर की जाती थी, जिसमें अधिक समय लगता था और कई बार परिणाम पूरी तरह सटीक नहीं होते थे। आधुनिक आणविक तकनीकों ने इस समस्या का समाधान प्रस्तुत किया है। पॉलीमरेज चेन रिएक्शन (PCR) तकनीक रोगजनकों के डीएनए या आरएनए की सूक्ष्मतम मात्रा की पहचान कर सकती है। इस तकनीक की सहायता से रोग के प्रारंभिक चरण में ही उसकी उपस्थिति का पता लगाया जा सकता है। रियल–टाइम च्ब्ट तकनीक इससे भी अधिक उन्नत है, क्योंकि यह केवल रोगजनक की पहचान ही नहीं करती बल्कि उसकी मात्रा का भी निर्धारण करती है। इसी प्रकार LAMP तकनीक कम लागत और सरल प्रक्रिया के कारण खेत स्तर पर रोग निदान के लिए उपयोगी सिद्ध हो रही है।

लाभ: रोग की शीघ्र पहचान, उच्च सटीकता, प्रारंभिक अवस्था में रोग नियंत्रण की सुविधा, समय एवं धन की बचत तथा रोग फैलने की संभावना में कमी।

**नेक्स्ट जेनरेशन सीक्वेंसिंग (NGS) और जीनोमिक्स तकनीक**

पादप रोगों के अध्ययन में जीनोमिक्स और नेक्स्ट जेनरेशन सीक्वेंसिंग तकनीक का महत्व लगातार बढ़ रहा है। जीनोमिक्स के माध्यम से पौधों तथा रोगजनकों के संपूर्ण जीनोम का अध्ययन किया जाता है। इससे रोगजनकों की संरचना, उत्पत्ति, विविधता तथा उनके संक्रमण तंत्र को समझने में सहायता मिलती है। NGS तकनीक लाखों डीएनए अनुक्रमों का एक साथ विश्लेषण कर सकती है, जिससे नए रोगजनकों की पहचान करना संभव हो गया है। यह तकनीक विशेष रूप से उन रोगों के अध्ययन में उपयोगी है जिनकी पहचान पारंपरिक विधियों से कठिन होती है।

लाभ: नए रोगजनकों की पहचान, रोगजनकों की विविधता का अध्ययन, रोग प्रतिरोधी जीनों की खोज तथा रोग नियंत्रण रणनीतियों के विकास में सहायता।

**CRISPR-Cas9 जीन संपादन तकनीक:**

पादप रोगों से सुरक्षा प्रदान करने के लिए जीन संपादन तकनीक एक महत्वपूर्ण उपलब्धि मानी जाती है। CRISPR-Cas9 तकनीक पौधों के जीनोम में सटीक परिवर्तन करने की क्षमता रखती है। इस तकनीक के माध्यम से उन जीनों को संशोधित

[1,2]विद्यावाचस्पति शोधार्थी, पादप रोग विज्ञान विभाग, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर

किया जा सकता है जो रोगों के प्रति संवेदनशीलता बढ़ाते हैं। परिणामस्वरूप ऐसी फसल किस्में विकसित की जा सकती हैं जो विभिन्न रोगों के प्रति प्रतिरोधी हों। वर्तमान में चावल, टमाटर, गेहूँ तथा अन्य फसलों में इस तकनीक का सफल उपयोग किया जा रहा है।

लाभ: रोग प्रतिरोधी किस्मों का विकास, रासायनिक दवाओं पर निर्भरता में कमी, कम समय में सुधारित किस्मों की प्राप्ति तथा टिकाऊ कृषि को बढ़ावा।

**RNA इंटरफेरेंस (RNAi) तकनीक:**

RNA इंटरफेरेंस एक आधुनिक जैविक तकनीक है, जो रोगजनकों के विशिष्ट जीनों को निष्क्रिय करके उनके विकास और संक्रमण क्षमता को कम करती है। यह तकनीक विशेष रूप से विषाणु जनित रोगों के नियंत्रण में प्रभावी मानी जाती है। RNAi आधारित रोग प्रबंधन में पौधों की प्राकृतिक रक्षा प्रणाली को मजबूत किया जाता है, जिससे रोगजनक पौधों को संक्रमित नहीं कर पाते।

लाभ: पर्यावरण के लिए सुरक्षित, लक्ष्य आधारित रोग नियंत्रण, विषाणु रोगों के विरुद्ध प्रभावी तथा रासायनिक नियंत्रण की आवश्यकता में कमी।

**कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence) आधारित रोग पहचान**

वर्तमान समय में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) कृषि क्षेत्र में तेजी से लोकप्रिय हो रही है। AI आधारित प्रणालियाँ पौधों की पत्तियों, तनों तथा फलों की तस्वीरों का विश्लेषण करके रोग की पहचान कर सकती हैं। मोबाइल एप्लीकेशन तथा कंप्यूटर आधारित सॉफ्टवेयर कुछ ही सेकंड में रोग का नाम, उसकी गंभीरता तथा नियंत्रण उपाय बता सकते हैं। मशीन लर्निंग और डीप लर्निंग तकनीकों ने इस क्षेत्र को और अधिक प्रभावी बना दिया है।

लाभ: त्वरित रोग पहचान, मानव त्रुटियों में कमी, किसानों को तत्काल सलाह, कम लागत तथा व्यापक उपयोगिता।

**ड्रोन तकनीक द्वारा रोग निगरानी:**

ड्रोन आधुनिक कृषि की सबसे उपयोगी तकनीकों में से एक बन चुके हैं। ड्रोन में लगे कैमरे और मल्टीस्पेक्ट्रल सेंसर फसलों की स्थिति का विश्लेषण करते हैं तथा रोगग्रस्त क्षेत्रों की पहचान करते हैं। ड्रोन के माध्यम से बड़े कृषि क्षेत्रों का सर्वेक्षण बहुत कम समय में किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त रोगग्रस्त क्षेत्रों में लक्षित रूप से दवाओं का छिड़काव भी किया जा सकता है।

लाभ: समय की बचत, बड़े क्षेत्रों की निगरानी, सटीक दवा छिड़काव, श्रम लागत में कमी तथा प्रारंभिक अवस्था में रोग पहचान।

**रिमोट सेंसिंग तकनीक:**

रिमोट सेंसिंग तकनीक में उपग्रहों तथा सेंसरों का उपयोग करके फसलों की निगरानी की जाती है। रोगग्रस्त पौधों में होने वाले सूक्ष्म परिवर्तनों को यह तकनीक प्रारंभिक अवस्था में पहचान सकती है। इस तकनीक का उपयोग विशेष रूप से बड़े कृषि क्षेत्रों में रोगों के प्रसार की निगरानी के लिए किया जाता है।

लाभ: बड़े क्षेत्रों का एक साथ विश्लेषण, रोगों का प्रारंभिक पता लगाना, रोग प्रसार का अध्ययन तथा प्रबंधन योजनाओं का विकास।

**इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT) आधारित रोग प्रबंधन:**

IoT तकनीक के अंतर्गत विभिन्न प्रकार के सेंसर खेतों में लगाए जाते हैं जो तापमान, आर्द्रता, मिट्टी की नमी तथा अन्य पर्यावरणीय कारकों की जानकारी एकत्र करते हैं। यह जानकारी इंटरनेट के माध्यम से विश्लेषण प्रणालियों तक पहुँचती है, जहाँ रोगों के संभावित प्रकोप का पूर्वानुमान लगाया जाता है।

लाभ: वास्तविक समय निगरानी, रोग पूर्वानुमान, संसाधनों का कुशल उपयोग तथा समय पर रोग नियंत्रण।

**नैनो प्रौद्योगिकी (Nanotechnology) और पादप रोग नियंत्रण:**

नैनो प्रौद्योगिकी वर्तमान समय की सबसे उभरती हुई तकनीकों में से एक है। नैनोकणों का उपयोग रोगजनकों के नियंत्रण, रोग पहचान तथा दवाओं के नियंत्रित वितरण में किया जा रहा है। नैनो आधारित फफूंदनाशी और जीवाणुनाशी कम मात्रा में अधिक प्रभावी होते हैं तथा पर्यावरण पर कम प्रभाव डालते हैं।

लाभ: कम मात्रा में अधिक प्रभाव, पर्यावरण–अनुकूल रोग नियंत्रण, दवाओं की दक्षता में वृद्धि तथा रोग पहचान में सटीकता।

**बायोसेंसर तकनीक:**

बायोसेंसर ऐसे उपकरण हैं जो

रोगजनकों की उपस्थिति का त्वरित पता लगाने में सक्षम होते हैं। ये जैविक अणुओं और इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के संयोजन से कार्य करते हैं। बायोसेंसर तकनीक के माध्यम से खेत में ही रोग की पहचान संभव हो गई है।

लाभ: त्वरित परिणाम, उच्च संवेदनशीलता, कम लागत तथा पोर्टेबल उपयोग।

**माइक्रोबायोम आधारित रोग प्रबंधन:**

पौधों के आसपास रहने वाले लाभकारी सूक्ष्मजीव पौधों की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। आधुनिक अनुसंधान से यह स्पष्ट हुआ है कि पौधों का माइक्रोबायोम रोगों के विरुद्ध प्राकृतिक सुरक्षा प्रदान करता है। ट्राइकोडर्मा, स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस तथा बैसिलस जैसे सूक्ष्मजीवों का उपयोग जैव नियंत्रण एजेंट के रूप में किया जा रहा है।

लाभ: पर्यावरण–अनुकूल रोग नियंत्रण, रासायनिक दवाओं की आवश्यकता में कमी, पौध वृद्धि में वृद्धि तथा दीर्घकालिक सुरक्षा।

**डिजिटल कृषि और बिग डेटा एनालिटिक्स:**

डिजिटल कृषि में विभिन्न स्रोतों से प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषण करके रोग प्रबंधन संबंधी निर्णय लिए जाते हैं। बिग डेटा एनालिटिक्स मौसम, मिट्टी, रोग तथा फसल संबंधी विशाल जानकारी का विश्लेषण करता है। इसके आधार पर रोगों के संभावित प्रकोप का पूर्वानुमान लगाया जाता है।

लाभ: सटीक निर्णय, रोग पूर्वानुमान, उत्पादन में वृद्धि तथा संसाधनों का बेहतर प्रबंधन।

**रोग पूर्वानुमान मॉडल:**

आधुनिक कम्प्यूटर आधारित मॉडल मौसम तथा पर्यावरणीय परिस्थितियों के आधार पर रोगों की संभावना का अनुमान लगाते हैं। यदि किसी क्षेत्र में रोग फैलने की संभावना अधिक होती है तो किसानों को पहले से चेतावनी दी जा सकती है। इससे रोग नियंत्रण अधिक प्रभावी हो जाता है।

लाभ: समय पर चेतावनी, रोग नियंत्रण लागत में कमी, रासायनिक दवाओं का विवेकपूर्ण उपयोग तथा उपज की सुरक्षा।

**भारत में पादप रोगों की नई तकनीकों का उपयोग:**

भारत में कृषि अनुसंधान संस्थानों द्वारा पादप रोगों के नियंत्रण हेतु आधुनिक तकनीकों पर निरंतर कार्य किया जा रहा है। Indian Council of Agricultural Research, Indian Agricultural Research Institute तथा National Institute of Plant Genome Research जैसे संस्थान रोग निदान, जीन संपादन, जैव नियंत्रण तथा डिजिटल रोग प्रबंधन प्रणालियों के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं। इनके द्वारा विकसित तकनीकों से किसानों को रोगों की शीघ्र पहचान और प्रभावी नियंत्रण में सहायता मिल रही है।

**चुनौतियाँ और भविष्य की संभावनाएँ:**

यद्यपि पादप रोगों के प्रबंधन में नई तकनीकों ने अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की है, फिर भी कुछ चुनौतियाँ मौजूद हैं। इन तकनीकों की लागत अपेक्षाकृत अधिक है, प्रशिक्षित विशेषज्ञों की आवश्यकता होती है तथा ग्रामीण क्षेत्रों में इनकी उपलब्धता सीमित है। इसके बावजूद तकनीकी विकास के साथ इनकी लागत कम हो रही है और उपयोगिता बढ़ रही है। भविष्य में कृत्रिम बुद्धिमत्ता, जीन संपादन, स्मार्ट सेंसर नेटवर्क, उन्नत ड्रोन तथा नैनो प्रौद्योगिकी का व्यापक उपयोग पादप रोग प्रबंधन को और अधिक प्रभावी बनाएगा।

**निष्कर्ष:**

पादप रोगों में नई तकनीकों ने रोग पहचान, निगरानी, पूर्वानुमान तथा नियंत्रण की पारंपरिक अवधारणाओं को पूरी तरह बदल दिया है। आणविक निदान तकनीकें, जीनोमिक्स, CRISPR-Cas9, RNA इंटरफेरेंस, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, ड्रोन, रिमोट सेंसिंग, IoT, नैनो प्रौद्योगिकी तथा माइक्रोबायोम आधारित रोग प्रबंधन जैसी तकनीकें आधुनिक कृषि की आधारशिला बन चुकी हैं। इन तकनीकों के माध्यम से रोगों की प्रारंभिक पहचान, प्रभावी नियंत्रण तथा टिकाऊ कृषि विकास संभव हो रहा है। भविष्य में इनका व्यापक उपयोग खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने, किसानों की आय बढ़ाने तथा पर्यावरण संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। इस प्रकार "पादप रोगों में नई तकनीकें" आधुनिक कृषि को अधिक सुरक्षित, उत्पादक और वैज्ञानिक बनाने की दिशा में एक क्रांतिकारी कदम सिद्ध हो रही हैं।

# सब्जी उत्पादन में कृत्रिम बुद्धिमत्ता ( AI ) की भूमिका

कुलदीप हरियाणा[1], डॉ. राजू लाल भारद्वाज[2], डॉ. कुलदीप सिंह राजावत[3]

## परिचय

भारत में सब्जी उत्पादन कृषि अर्थव्यवस्था का एक अत्यंत महत्वपूर्ण आधार है, जो न केवल किसानों की आय का प्रमुख स्रोत है बल्कि देश की खाद्य एवं पोषण सुरक्षा में भी अहम भूमिका निभाता है। वर्तमान समय में बढ़ती जनसंख्या, जलवायु परिवर्तन, सीमित कृषि भूमि, जल संसाधनों की कमी तथा उत्पादन लागत में निरंतर वृद्धि जैसी चुनौतियाँ कृषि क्षेत्र के सामने गंभीर रूप से उपस्थित हैं। इन परिस्थितियों में पारंपरिक कृषि पद्धतियों के साथ-साथ आधुनिक तकनीकों का समावेश आवश्यक हो गया है। इन्हीं आधुनिक तकनीकों में कृत्रिम बुद्धिमत्ता एक अत्यंत प्रभावशाली एवं उभरती हुई तकनीक के रूप में सामने आई है, जो कृषि प्रणाली को अधिक वैज्ञानिक, सटीक और कुशल बनाने की क्षमता रखती है। AI आधारित तकनीकें कृषि कार्यों में निर्णय लेने की प्रक्रिया को सरल बनाती हैं तथा उत्पादन क्षमता, संसाधन उपयोग दक्षता और उत्पाद की गुणवत्ता में उल्लेखनीय सुधार करती हैं।

## कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) की सैद्धांतिक अवधारणा

कृत्रिम बुद्धिमत्ता एक ऐसी उन्नत तकनीकी प्रणाली है, जिसमें कंप्यूटर और मशीनें मानव मस्तिष्क की तरह सीखने, समझने, विश्लेषण करने, निर्णय लेने और समस्याओं का समाधान करने में सक्षम होती हैं। यह तकनीक विभिन्न प्रकार के डेटा जैसे मौसम संबंधी जानकारी, मृदा के गुण, फसल की वृद्धि अवस्था, रोग एवं कीटों के लक्षण तथा उपग्रह एवं ड्रोन से प्राप्त चित्रों का गहन विश्लेषण करके उपयोगी निष्कर्ष प्रदान करती है। AI का मूल आधार मशीन लर्निंग और डेटा एनालिटिक्स है, जो इसे समय के साथ और अधिक सटीक एवं प्रभावी बनाता है।

## सब्जी उत्पादन में AI की सैद्धांतिक आवश्यकता

सब्जी फसलें अल्प अवधि में तैयार होने वाली तथा अत्यधिक संवेदनशील प्रकृति की होती हैं, जिनमें प्रत्येक कृषि क्रिया का समय पर होना अत्यंत आवश्यक होता है। सिंचाई, पोषण प्रबंधन, रोग एवं कीट नियंत्रण तथा कटाई जैसे कार्यों में थोड़ी भी देरी उत्पादन और गुणवत्ता दोनों को प्रभावित कर सकती है। ऐसे में AI आधारित प्रणाली कृषि कार्यों को डेटा-आधारित बनाकर अधिक सटीक और समयबद्ध निर्णय लेने में सहायता करती है। इससे कृषि प्रणाली अधिक संगठित, कुशल और वैज्ञानिक बनती है तथा उत्पादन जोखिम में कमी आती है।

## मौसम आधारित कृषि निर्णय प्रणाली

कृषि उत्पादन में मौसम एक प्रमुख और निर्णायक कारक होता है। AI आधारित मॉडल तापमान, वर्षा, आर्द्रता और वायु गति जैसे मौसमीय तत्वों का विश्लेषण करके भविष्य की संभावित परिस्थितियों का पूर्वानुमान करते हैं। इस पूर्वानुमान के आधार पर किसान बुवाई, सिंचाई, उर्वरक प्रबंधन और रोग नियंत्रण जैसे कार्यों की योजना अधिक वैज्ञानिक ढंग से बना सकते हैं। यह प्रणाली न केवल उत्पादन बढ़ाने में सहायक होती है बल्कि प्राकृतिक जोखिमों से होने वाले नुकसान को भी कम करती है।

## रोग एवं कीट प्रबंधन में AI की भूमिका

AI आधारित इमेज प्रोसेसिंग और मशीन लर्निंग तकनीकें पौधों की पत्तियों, तनों और फलों में दिखाई देने वाले रोग एवं कीट लक्षणों का सूक्ष्म विश्लेषण करने में सक्षम होती हैं। यह प्रणाली प्रारंभिक अवस्था में ही समस्या की पहचान कर लेती है, जिससे समय पर नियंत्रण उपाय अपनाए जा सकते हैं। इसके परिणामस्वरूप रासायनिक कीटनाशकों के अनावश्यक उपयोग में कमी आती है, उत्पादन लागत घटती है और पर्यावरणीय संतुलन भी बना रहता है।

## सिंचाई प्रबंधन में AI का उपयोग

AI आधारित सिंचाई प्रणाली मृदा में नमी की स्थिति, मौसम पूर्वानुमान और फसल की जल आवश्यकता का विश्लेषण करके यह निर्धारित करती है कि सिंचाई कब और कितनी मात्रा में की जानी चाहिए। इससे जल संसाधनों का अत्यधिक कुशल उपयोग संभव होता है तथा जल की बचत होती है। ड्रिप सिंचाई प्रणाली के साथ AI का

1 विद्यावाचस्पति छात्र, 2 आचार्य, 3 सहायक आचार्य, उद्यान विज्ञान विभाग, कृषि विश्वविद्यालय–जोधपुर
ईमेल: gurjarkuldeep002@gmail.com

एकीकरण कृषि में जल प्रबंधन को और अधिक प्रभावी एवं वैज्ञानिक बनाता है।

**पोषक तत्व प्रबंधन की सैद्धांतिक भूमिका**

AI मृदा परीक्षण रिपोर्ट, फसल की वृद्धि अवस्था और पोषक तत्वों की आवश्यकता का विश्लेषण करके उर्वरक प्रबंधन के लिए वैज्ञानिक सुझाव प्रदान करती है। इससे संतुलित उर्वरक उपयोग सुनिश्चित होता है, मृदा की उर्वरता लंबे समय तक बनी रहती है और फसल उत्पादन में स्थिर वृद्धि प्राप्त होती है।

**ड्रोन एवं AI का एकीकृत उपयोग**

ड्रोन तकनीक और AI का संयुक्त उपयोग कृषि निगरानी और प्रबंधन को अत्यंत प्रभावी बनाता है। ड्रोन द्वारा प्राप्त उच्च गुणवत्ता वाले चित्रों का AI द्वारा विश्लेषण करके फसल की स्थिति, रोग–कीट संक्रमण और पोषक तत्वों की कमी का सटीक आकलन किया जा सकता है। यह तकनीक बड़े कृषि क्षेत्रों में समय, श्रम और लागत की बचत करती है तथा निर्णय प्रक्रिया को अधिक वैज्ञानिक बनाती है।

**खरपतवार प्रबंधन में AI की भूमिका**

AI आधारित मशीन विजन तकनीक फसल और खरपतवार के बीच अंतर को पहचानने में सक्षम होती है। इसके आधार पर केवल खरपतवार प्रभावित क्षेत्रों में ही नियंत्रण उपाय अपनाए जाते हैं। इससे रासायनिक दवाओं का उपयोग कम होता है, उत्पादन लागत घटती है और पर्यावरण संरक्षण को भी बढ़ावा मिलता है।

**कटाई एवं गुणवत्ता मूल्यांकन प्रणाली**

AI आधारित तकनीकें सब्जियों की परिपक्वता, आकार, रंग और गुणवत्ता का विश्लेषण करके यह निर्धारित कर सकती हैं कि कटाई का सही समय कब है। इससे ग्रेडिंग और छंटाई की प्रक्रिया अधिक वैज्ञानिक और सटीक बनती है। परिणामस्वरूप उत्पाद की बाजार गुणवत्ता में सुधार होता है और किसानों को बेहतर मूल्य प्राप्त होता है।

**बाजार विश्लेषण एवं मूल्य पूर्वानुमान**

AI विभिन्न कृषि बाजारों से प्राप्त मूल्य, मांग और आपूर्ति संबंधी डेटा का विश्लेषण करके भविष्य के मूल्य रुझानों का अनुमान लगाती है। यह प्रणाली किसानों को यह निर्णय लेने में सहायता करती है कि किस समय और किस बाजार में उत्पाद बेचने से अधिक लाभ प्राप्त होगा। इससे किसानों की आय में वृद्धि होती है और विपणन जोखिम कम होता है।

**AI के सैद्धांतिक लाभ**

कृत्रिम बुद्धिमत्ता कृषि उत्पादन प्रणाली में दक्षता बढ़ाने, संसाधनों के वैज्ञानिक उपयोग, उत्पादन लागत में कमी, रोग एवं कीट प्रबंधन में सुधार, जल एवं उर्वरक उपयोग दक्षता में वृद्धि, पर्यावरणीय स्थिरता को बढ़ावा देने तथा बाजार निर्णय क्षमता को मजबूत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसके साथ ही यह जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से निपटने में भी सहायक सिद्ध होती है।

**सीमाएँ एवं चुनौतियाँ**

AI आधारित कृषि प्रणाली के व्यापक उपयोग में कुछ व्यावहारिक और सैद्धांतिक चुनौतियाँ भी विद्यमान हैं, जिनमें तकनीकी ज्ञान की कमी, डिजिटल अवसंरचना की सीमित उपलब्धता, इंटरनेट एवं बिजली की अनियमितता, प्रारंभिक निवेश लागत का अधिक होना तथा स्थानीय भाषाओं में तकनीकी संसाधनों की कमी प्रमुख हैं। इन चुनौतियों के समाधान हेतु प्रशिक्षण, सरकारी सहयोग और संस्थागत समर्थन अत्यंत आवश्यक है।

**भविष्य की संभावनाएँ**

भविष्य में कृत्रिम बुद्धिमत्ता का एकीकरण इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT), रोबोटिक्स, ड्रोन और सैटेलाइट तकनीकों के साथ मिलकर कृषि क्षेत्र को और अधिक उन्नत बनाएगा। इससे एक ऐसी स्मार्ट कृषि प्रणाली विकसित होगी, जिसमें सभी निर्णय डेटा आधारित होंगे। यह प्रणाली विशेष रूप से छोटे और सीमांत किसानों के लिए अत्यंत लाभकारी सिद्ध होगी और कृषि को अधिक लाभकारी एवं टिकाऊ बनाएगी।

**निष्कर्ष**

सैद्धांतिक रूप से कृत्रिम बुद्धिमत्ता कृषि उत्पादन प्रणाली को अधिक वैज्ञानिक, सटीक और कुशल बनाने की अपार क्षमता रखती है। यह तकनीक संसाधनों के अनुकूलतम उपयोग, उत्पादन वृद्धि और गुणवत्ता सुधार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यदि AI आधारित तकनीकों को कृषि अनुसंधान, स्थानीय परिस्थितियों और किसानों की आवश्यकताओं के अनुरूप अपनाया जाए, तो सब्जी उत्पादन प्रणाली अधिक टिकाऊ, आधुनिक और लाभकारी बन सकती है। वास्तव में, कृत्रिम बुद्धिमत्ता का समावेश भविष्य की स्मार्ट कृषि प्रणाली की मजबूत आधारशिला है।

# नीम आधारित जैविक कीटनाशीः घर पर तैयार करने की सरल विधि एवं कम लागत में फसलों का कीट प्रबंधन

मुकेश[1], महेंद्रा[2]

## परिचय

फसलों में कीटों के प्रकोप से किसानों को उत्पादन में कमी से आर्थिक हानि होती है। रासायनिक कीटनाशियों के अत्यधिक उपयोग से पर्यावरण, मानव स्वास्थ्य, मित्र कीटों तथा कीटों में प्रतिरोधकता विकसित होने जैसी समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं। ऐसे में जैविक एवं वनस्पति आधारित कीटनाशी, समेकित कीट प्रबंधन का एक प्रभावी और पर्यावरण–अनुकूल विकल्प हैं। इनमें नीम आधारित कीटनाशी विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि इनमें पाए जाने वाले प्राकृतिक यौगिक कई कीटों की वृद्धि, भोजन एवं प्रजनन को प्रभावित कर उनके प्रबंधन में सहायक होते हैं।

## जैविक या वनस्पति आधारित कीटनाशी क्या है?

जैविक या वनस्पति आधारित कीटनाशी प्राकृतिक स्रोतों, जैसे पौधों एवं सूक्ष्मजीवों से प्राप्त पदार्थ हैं, जिनका उपयोग फसलों में हानिकारक कीटों के प्रबंधन के लिए किया जाता है। नीम, गुलदाउदी, तंबाकू, डेरिस, करंज, लहसुन और मिर्च जैसे पौधों में प्राकृतिक रूप से कीट–नियंत्रण गुण पाए जाते हैं। इनमें नीम सबसे अधिक प्रचलित वनस्पति आधारित कीटनाशी है। नीम में पाया जाने वाला अजाडिरैक्टिन कीटों के भोजन, वृद्धि एवं प्रजनन को प्रभावित कर उनके प्रबंधन में सहायक हो सकता है।

## नीम आधारित कीटनाशी बनाने और उपयोग करने की विधि

चरण 1: आवश्यक सामग्री

जैव–कीटनाशी तैयार करने के लिए 1.5 किलोग्राम ताजी नीम की पत्तियाँ, 10 ग्राम प्राकृतिक कपड़े धोने का साबुन, ओखली और मूसल, छलनी या साफ सफेद कपड़ा, एक बाल्टी या टब, तराजू, स्वच्छ पानी, दस्ताने तथा स्प्रे पम्प की आवश्यकता होती है।

चरण 2: जैव–कीटनाशी तैयार करने की विधि

- ➢ 1.5 किलोग्राम ताजी एवं कोमल नीम की पत्तियाँ एकत्र करें।
- ➢ ओखली और मूसल की सहायता से पत्तियों को अच्छी तरह पीसकर महीन पेस्ट बना लें।
- ➢ तैयार पेस्ट को एक साफ बाल्टी में डालें।
- ➢ इसमें 5 लीटर स्वच्छ पानी मिलाकर अच्छी तरह घोलें।
- ➢ इसमें 10 ग्राम कद्दूकस किया हुआ कपड़े धोने का साबुन मिलाकर अच्छी तरह हिलाएँ।
- ➢ मिश्रण को ढककर छायादार स्थान पर 24 घंटे तक रखें।
- ➢ 24 घंटे बाद लकड़ी की डंडी या साफ हाथों से मिश्रण को अच्छी तरह मिलाएँ।
- ➢ मिश्रण को साफ कपड़े या छलनी से छान लें।
- ➢ तैयार घोल को स्प्रे पम्प में भरें।
- ➢ जैव–कीटनाशी उपयोग के लिए तैयार है।

चरण 3: उपयोग की विधि एवं सावधानियाँ

- ➢ घोल का उपयोग करते समय दस्ताने अवश्य पहनें।
- ➢ घोल को आँखों एवं मुँह के संपर्क में आने से बचाएँ।
- ➢ 250 वर्गमीटर क्षेत्र में 5 लीटर तैयार घोल का छिड़काव करें।
- ➢ छिड़काव सुबह जल्दी या शाम के समय करें।
- ➢ फूल आने की अवस्था में छिड़काव न करें।
- ➢ घोल को ठंडी एवं छायादार जगह पर रखें।
- ➢ तैयार घोल का 2–3 दिनों के भीतर उपयोग कर लें।

## नीम आधारित कीटनाशी किन कीटों के प्रबंधन में उपयोगी है?

नीम आधारित उत्पाद मुख्य रूप से रस चूसने वाले कीटों, जैसे माहू, सफेद मक्खी, थ्रिप्स और जैसिड (हरा तेला), तथा कुछ पत्ती खाने वाले कीटों की

[1]स्नातकोत्तर शोधार्थी, कीट विज्ञान विभाग, कृषि महाविधालय, स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर–334006
[2]विद्यावाचस्पति शोधार्थी, कीट विज्ञान विभाग, कृषि महाविधालय, स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर–334006

प्रारंभिक अवस्थाओं के प्रबंधन में उपयोगी होती हैं। इनका प्रभाव कीट की प्रजाति एवं विकास अवस्था के अनुसार भिन्न हो सकता है। नीम आधारित कीटनाशी सामान्यतः कीटों को तुरंत नष्ट करने के बजाय उनके भोजन ग्रहण, वृद्धि, विकास एवं प्रजनन को प्रभावित कर उनकी संख्या नियंत्रित करने में सहायक होते हैं। यदि खेत में कीटों का प्रकोप अधिक हो, तो केवल घरेलू नीम घोल पर निर्भर रहने के बजाय कृषि विशेषज्ञ की सलाह के अनुसार समेकित कीट प्रबंधन अपनाना चाहिए।

**रासायनिक कीटनाशकों की तुलना में लाभ और सीमाएं**

**लाभ**

- कम लागतरू नीम की पत्तियां आसानी से उपलब्ध होने पर किसान कम लागत में घरेलू घोल तैयार कर सकते हैं।
- प्राकृतिक स्रोत : नीम आधारित पदार्थ प्राकृतिक स्रोत से प्राप्त होते हैं और समेकित कीट प्रबंधन में उपयोगी विकल्प हो सकते हैं।
- कीटों पर विभिन्न प्रकार का प्रभाव : नीम के सक्रिय यौगिक कुछ कीटों में भोजन ग्रहण, वृद्धि, विकास और प्रजनन को प्रभावित कर सकते हैं।
- मित्र कीटों का संरक्षण : उचित उपयोग और सही समय पर छिड़काव करने से व्यापक प्रभाव वाले रासायनिक कीटनाशियों की तुलना में गैर–लक्षित जीवों पर जोखिम कम करने में मदद मिलती है।
- कीटनाशी प्रतिरोध प्रबंधन में सहयोग : समेकित कीट प्रबंधन में विभिन्न प्रकार के नियंत्रण उपायों के साथ नीम आधारित उत्पादों का उपयोग कीटनाशी प्रतिरोध के प्रबंधन की रणनीति का हिस्सा हो सकता है।

**सीमाएं**

- घरेलू घोल की गुणवत्ता और सक्रिय तत्वों की मात्रा निश्चित नहीं होती।
- इसका प्रभाव रासायनिक कीटनाशियों की तुलना में धीमा हो सकता है।
- अधिक कीट प्रकोप में अकेले इसका उपयोग पर्याप्त नहीं हो सकता।
- बारिश के बाद इसकी प्रभावशीलता कम हो सकती है।
- सभी कीटों पर समान प्रभाव नहीं होता।
- गलत मात्रा या गलत तरीके से उपयोग करने पर अपेक्षित परिणाम नहीं मिल सकते।

**निष्कर्ष**

नीम आधारित जैविक कीटनाशी कम लागत, पर्यावरण–अनुकूलता और समेकित कीट प्रबंधन में उपयोगिता के कारण किसानों के लिए एक अच्छा विकल्प हो सकता है। इसका प्रभाव उचित समय, सही विधि एवं नियमित उपयोग पर निर्भर करता है। दि कीट प्रकोप अधिक हो, तो नीम आधारित घोल का उपयोग समेकित कीट प्रबंधन के अन्य उपायों के साथ करना अधिक प्रभावी होता है। इससे फसल संरक्षण के साथ–साथ पर्यावरण एवं मित्र कीटों का संरक्षण भी संभव है।

**पत्रिका में प्रकाशित आलेख/ विचार लेखकों के अपने हैं।**

# सब्जियों की कटाई के पश्चात प्रबन्धन

रोहित मीना[1], आशीष मीना[2], मोनिका मीना[2], सिमरन मीना[2], हरकेश मीना[3]

भारत विविध जलवायु परिस्थितियों एवं मृदा प्रकारों वाला एक कृषि प्रधान देश है, जिसके कारण यहाँ सब्जियों की व्यापक विविधता पाई जाती है। उद्यानिकी क्षेत्र भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण घटक है, जो पोषण सुरक्षा, रोजगार सृजन तथा किसानों की आय वृद्धि में महत्वपूर्ण योगदान देता है। भारत वर्तमान में सब्जियों के उत्पादन में विश्व स्तर पर चीन के बाद दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक देश है। पिछले कुछ दशकों में उद्यानिकी फसलों के क्षेत्रफल, उत्पादन एवं उत्पादकता में उल्लेखनीय वृद्धि दर्ज की गई है। वर्ष 2025–26 के दौरान देश में लगभग 221.01 मिलियन टन सब्जियों का उत्पादन हुआ, जो उद्यानिकी क्षेत्र की बढ़ती महत्ता को दर्शाता है।

कृषि की अन्य फसलों की तुलना में सब्जियाँ तुड़ाई के पश्चात् शीघ्र खराब होने लगती हैं, क्योंकि इनकी भंडारण क्षमता अपेक्षाकृत कम होती है। अपर्याप्त भंडारण सुविधाएँ, परिवहन के दौरान होने वाली क्षति, अनुचित पैकेजिंग तथा प्रसंस्करण सुविधाओं के अभाव के कारण अनुमानतः 4.87 – 11.61 प्रतिशत सब्जियाँ उपभोक्ताओं तक पहुँचने से पूर्व ही नष्ट हो जाती हैं। यह हानि न केवल किसानों की आय को प्रभावित करती है, बल्कि राष्ट्रीय खाद्य एवं पोषण सुरक्षा पर भी प्रतिकूल प्रभाव डालती है।

**सब्जी परिरक्षण की वर्तमान स्थिति :** भारत बागवानी उत्पादन में विश्व के अग्रणी देशों में शामिल है, फिर भी फसल कटाई उपरांत प्रबंधन के क्षेत्र में अपेक्षित प्रगति नहीं हो सकी है। विशेष रूप से कोल्ड चेन नेटवर्क, भंडारण सुविधाओं एवं प्रसंस्करण इकाइयों का विकास अभी भी पर्याप्त नहीं है, जिसके कारण नाशवान उत्पादों का सुरक्षित प्रबंधन एक चुनौती बना हुआ है। भारत में बागवानी उत्पादों का मूल्यवर्धन केवल 8–10 प्रतिशत के स्तर पर है, जबकि चीन (23 प्रतिशत), फिलीपींस (45 प्रतिशत), ब्राजील (30 प्रतिशत), अमेरिका (70 प्रतिशत), मलेशिया (82 प्रतिशत) तथा यूनाइटेड किंगडम (88 प्रतिशत) जैसे देशों में यह कहीं अधिक है। यह स्थिति दर्शाती है कि भारत में प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन की अपार संभावनाएँ विद्यमान हैं, जिनका अभी पूर्ण दोहन नहीं हो पाया है।

**परिरक्षण का महत्त्व :** किसानों को उनकी उपज का उचित मूल्य दिलाने, उपभोक्ताओं को गुणवत्तायुक्त उत्पाद उपलब्ध कराने तथा खाद्य एवं पोषण सुरक्षा को सुदृढ़ बनाने में सहायक है। इसके अतिरिक्त फल परिरक्षण उद्योग विदेशी मुद्रा अर्जन, ग्रामीण रोजगार सृजन तथा कृषि आधारित उद्यमिता को बढ़ावा देता है।

1. **आर्थिक महत्व** : सब्जियों के अधिक उत्पादन के समय मूल्य गिरावट को रोककर किसानों को बेहतर लाभ दिलाने तथा उपभोक्ताओं को वर्षभर उचित मूल्य पर उत्पाद उपलब्ध कराने में सहायक।

2. **औद्योगिक महत्व :** परिरक्षण उद्योग के विकास से पैकेजिंग, चीनी, रसायन, मशीनरी एवं परिवहन जैसे सहायक उद्योगों को प्रोत्साहन मिलता है।

3. **निर्यात संवर्धन :** परिरक्षित उत्पादों का निर्यात कर विदेशी मुद्रा अर्जित की जा सकती है, जिससे राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को मजबूती मिलती है।

4. **रोजगार सृजन :** परिरक्षण उद्योग प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार के अवसर उत्पन्न करता है तथा ग्रामीण एवं महिला उद्यमिता को बढ़ावा देता है।

5. **पोषण सुरक्षा :** सब्जियों का परिरक्षण उनकी पोषण गुणवत्ता को संरक्षित रखते हुए वर्षभर उपलब्धता सुनिश्चित करता है, जिससे संतुलित आहार, सूक्ष्म पोषक तत्वों की आपूर्ति एवं पोषण सुरक्षा को बढ़ावा मिलता है।

**फसल कटाई उपरांत नुकसान के प्रमुख कारण :** भारत में बागवानी फसलों के उत्पादन में निरंतर वृद्धि होने के बावजूद फसल कटाई उपरांत होने वाले नुकसानकृषि क्षेत्र के समक्ष एक गंभीर चुनौती बने हुए हैं। अक्सर देखा जाता है कि जब टमाटर, आलू, प्याज, मटर अथवा अन्य बागवानी फसलों का उत्पादन आवश्यकता से अधिक हो जाता है, तो बाजार में उनकी कीमतों में भारी गिरावट आ जाती है। ऐसी स्थिति में किसानों को दोहरी हानि का सामना करना पड़ता है। एक ओर उन्हें अपनी उपज का उचित मूल्य नहीं मिल पाता, वहीं दूसरी ओर भंडारण एवं विपणन सुविधाओं के अभाव में उपज का एक बड़ा भाग खराब हो जाता है। नाबार्ड की एक रिपोर्ट के अनुसार भारत में प्रतिवर्ष लगभग 92,651 करोड़ रुपये मूल्य का खाद्य पदार्थ उपभोक्ताओं तक पहुँचने से पूर्व ही फसल कटाई उपरांत विभिन्न चरणों में नष्ट हो जाता है। सब्जियों में होने वाली इस हानि के प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं

1. **अपर्याप्त आधारभूत अवसंरचना :** उचित भंडारण सुविधाओं, वैज्ञानिक गोदामों तथा सुदृढ़ परिवहन नेटवर्क की कमी फसल कटाई उपरांत होने वाले नुकसान का प्रमुख कारण है। उत्पादन स्थलों से बाजारों तक

[1]महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उदयपुर
[2]कृषि विज्ञान केन्द्र, भीलवाड़ा–I

परिवहन के दौरान तापमान, आर्द्रता तथा संभाल संबंधी समस्याओं के कारण उपज की गुणवत्ता प्रभावित होती है और उसका एक बड़ा भाग खराब हो जाता है। विशेष रूप से नाशवान फल एवं सब्जियाँ इस समस्या से अधिक प्रभावित होती हैं।

**2. अनुचित रख–रखाव एवं प्रबंधन क्रियाएँ :** कटाई, छंटाई, ग्रेडिंग, पैकेजिंग तथा परिवहन के विभिन्न चरणों में वैज्ञानिक विधियों का अभाव उत्पादों को शारीरिक क्षति पहुँचाता है। अनुचित हैंडलिंग के कारण फलों एवं सब्जियों में चोट, दबाव तथा संक्रमण की संभावना बढ़ जाती है, जिससे उनकी गुणवत्ता में तेजी से गिरावट आती है और भंडारण अवधि कम हो जाती है।

**3. कोल्ड चेन सुविधाओं का अभाव :** बागवानी उत्पाद स्वभावतः अत्यधिक नाशवान होते हैं, इसलिए इनके संरक्षण हेतु प्रभावी कोल्ड चेन प्रणाली अत्यंत आवश्यक है। भारत में कोल्ड स्टोरेज, रेफ्रिजरेटेड परिवहन तथा तापमान नियंत्रित आपूर्ति श्रृंखला की सीमित उपलब्धता के कारण उत्पादों की गुणवत्ता शीघ्र प्रभावित होती है। परिणामस्वरूप उपज की शेल्फ लाइफ कम हो जाती है तथा आर्थिक हानि बढ़ जाती है।

**4. बाजार पहुँच एवं विपणन संबंधी चुनौतियाँ :** किसानों की सीमित बाजार पहुँच, बाजार संबंधी जानकारी का अभाव तथा विपणन तंत्र की कमजोरियाँ भी फसल कटाई उपरांत होने वाले नुकसान में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं। कई बार किसान अपनी उपज के लिए उपयुक्त बाजार नहीं खोज पाते, जिसके कारण उत्पाद लंबे समय तक बिना बिके पड़े रहते हैं और अंततः खराब हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त मांग एवं आपूर्ति के असंतुलन से मूल्य अस्थिरता उत्पन्न होती है, जिससे किसानों को आर्थिक नुकसान उठाना पड़ता है।

**प्रमुख तुड़ाई उपरांत प्रबंधन क्रियाएँ :** तुड़ाई उपरांत प्रबंधन का उद्देश्य सब्जियों की गुणवत्ता बनाए रखना, भंडारण अवधि बढ़ाना तथा आर्थिक हानि को कम करना है। इसके अंतर्गत निम्न प्रमुख क्रियाएँ सम्मिलित हैं

**1. प्री–कूलिंग (Pre-cooling) :** तुड़ाई के तुरंत बाद उत्पादों का तापमान कम करने की प्रक्रिया प्री–कूलिंग कहलाती है। यह श्वसन दर एवं नमी हानि को कम करके गुणवत्ता एवं

ताजगी बनाए रखने में सहायक होती है। फोर्स्ड एयर कूलिंग, हाइड्रो कूलिंग, वैक्यूम कूलिंग तथा आइसिंग प्रमुख विधियाँ हैं।

**2. धुलाई, सफाई एवं ग्रेडिंग :** सब्जियों से मिट्टी, रसायनों एवं सूक्ष्मजीवों को हटाने हेतु धुलाई की जाती है। इसके बाद आकार, रंग, वजन एवं गुणवत्ता के आधार पर ग्रेडिंग की जाती है, जिससे उत्पादों का बाजार मूल्य बढ़ता है।

**3. क्योरिंग (Curing) :** यह प्रक्रिया मुख्यतः आलू, प्याज, लहसुन तथा अन्य कंद एवं मूल वाली सब्जियों में अपनाई जाती है। क्योरिंग से घाव भरने, नमी हानि कम करने तथा भंडारण क्षमता बढ़ाने में सहायता मिलती है।

**4. वैक्सिंग (Waxing) :** उत्पादों की सतह पर खाद्य–ग्रेड मोम की पतली परत चढ़ाई जाती है, जिससे नमी हानि एवं श्वसन दर कम होती है तथा उत्पादों की गुणवत्ता एवं आकर्षण लंबे समय तक बना रहता है।

**5. विकिरण उपचार (Irradiation) :** उच्च ऊर्जा विकिरणों द्वारा उपचारित कर अंकुरण, कीट एवं सूक्ष्मजीव संक्रमण को नियंत्रित किया जाता है। यह विशेष रूप से आलू, प्याज एवं लहसुन के सुरक्षित भंडारण में उपयोगी है।

**6. वृद्धि नियामकों का उपयोग (Growth Regulators) :** वृद्धि नियामकों के प्रयोग से अंकुरण, परिपक्वता एवं वृद्धावस्था की प्रक्रिया को नियंत्रित कर भंडारण अवधि बढ़ाई जा सकती है। प्याज एवं आलू में मैलिक हाइड्राजाइड का प्रयोग व्यापक रूप से किया जाता है।

**7. कृत्रिम पकाना (Artificial Ripening) :** व्यावसायिक स्तर पर टमाटर एवं अन्य फलों को एथिलीन गैस द्वारा नियंत्रित रूप से पकाया जाता है, जिससे बाजार की मांग के अनुसार आपूर्ति सुनिश्चित की जा सके।

**8. पैकेजिंग एवं परिवहन :** उचित पैकेजिंग एवं सुरक्षित परिवहन तुड़ाई उपरांत हानियों को कम करने के लिए आवश्यक हैं। लेनो बैग, प्लास्टिक क्रेट तथा पॉलीएथिलीन पैकेजिंग का व्यापक उपयोग किया जाता है।

**9. भंडारण (Storage) :** उत्पादों को नियंत्रित तापमान एवं आर्द्रता पर भंडारित कर उनकी गुणवत्ता एवं शेल्फ लाइफ बढ़ाई जाती है। शीत भंडारण (Cold Storage) फल एवं सब्जियों की दीर्घकालीन सुरक्षा का सबसे प्रभावी साधन माना जाता है।

| क्र. सं. | सब्जी | तापमान (°C) | सपेक्षिक आर्द्रता (%) | भण्ड़ारण अवधि (सप्ताह) |
|---|---|---|---|---|
| 1 | खीरा | 10-13 | 92 | 2 |
| 2 | हरी मिर्च | 7-10 | 85-90 | 3-5 |
| 3 | टमाटर | 7-10 | 90 | 1 |
| 4 | मटर | 0 | 95 | 2-3 |
| 5 | बैंगन | 10-12 | 95 | 3 – 4 |
| 6 | पालक | 0 | 95 | 1 – 2 |
| 7 | पत्ता गोभी | 0 – 1 | 92 – 95 | 12 |
| 8 | फूलगोभी | 0 | 85 – 95 | 7 |
| 9 | गाजर | 0 | 95 | 20 – 24 |
| 10 | करेला | 10 – 12.5 | 85 – 90 | 4 |
| 11 | आलू | 4 – 7 | 85 | 34 |
| 12 | प्याज | 0 | 70 – 75 | 20 – 25 |
| 13 | लहसुन | 0 | 65 | 28 – 36 |
| 14 | शकरकंद | 13 – 16 | 80 – 90 | 13 – 20 |

**फसल कटाई उपरांत हानियों को कम करने हेतु प्रभावी रणनीतियाँ :** कटाई उपरांत होने वाली हानियाँ बागवानी क्षेत्र की प्रमुख चुनौतियों में से एक हैं, जो किसानों की आय, खाद्य उपलब्धता तथा कृषि क्षेत्र की समग्र उत्पादकता को प्रभावित करती हैं। इन हानियों को कम करने के लिए उत्पादन से लेकर उपभोक्ता तक सम्पूर्ण मूल्य श्रृंखला को सुदृढ़ बनाना आवश्यक है। इसके लिए निम्नलिखित रणनीतियाँ विशेष रूप से

महत्वपूर्ण हैं

**1. आधुनिक अवसंरचना का विकास :** फसल कटाई उपरांत प्रबंधन की सफलता के लिए कोल्ड स्टोरेज, पैकहाउस, प्रशीतित परिवहन तथा वैज्ञानिक भंडारण सुविधाओं का विकास अत्यंत आवश्यक है। सुदृढ़ कोल्ड चेन नेटवर्क उत्पादों की गुणवत्ता एवं ताजगी को बनाए रखते हुए उनकी शेल्फ लाइफ में वृद्धि करता है तथा परिवहन एवं विपणन के दौरान होने वाली क्षति को कम करता है।

**2. क्षमता निर्माण एवं कौशल विकास :** किसानों, कृषक उत्पादक संगठनों (FPOs) तथा कृषि उद्यमियों को वैज्ञानिक कटाई, ग्रेडिंग, पैकेजिंग, भंडारण एवं विपणन तकनीकों का प्रशिक्षण प्रदान किया जाना चाहिए। उन्नत तुड़ाई उपरांत प्रबंधन तकनीकों का ज्ञान उत्पादों की गुणवत्ता सुधारने तथा बाजार मूल्य बढ़ाने में सहायक होता है।

**3. आधुनिक प्रौद्योगिकियों का एकीकरण :** सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (ICT), इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT), सेंसर आधारित निगरानी प्रणाली तथा डेटा विश्लेषण तकनीकों के उपयोग से भंडारण एवं परिवहन के दौरान तापमान, आर्द्रता तथा उत्पाद गुणवत्ता की वास्तविक समय निगरानी की जा सकती है। इससे समय पर आवश्यक हस्तक्षेप संभव होता है तथा उत्पाद हानि को न्यूनतम किया जा सकता है।

**4. बाजार संपर्क एवं मूल्य श्रृंखला सुदृढ़ीकरण :** डिजिटल विपणन प्लेटफॉर्म, ई–मार्केटिंग प्रणाली, किसान उत्पादक संगठन (FPO) तथा सहकारी समितियाँ किसानों को प्रत्यक्ष रूप से उपभोक्ताओं एवं बड़े बाजारों से जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इससे विपणन दक्षता बढ़ती है, बिचौलियों पर निर्भरता कम होती है तथा किसानों को उनकी उपज का बेहतर मूल्य प्राप्त होता है।

**5. नीतिगत एवं संस्थागत समर्थन :** सरकार द्वारा कोल्ड चेन, मूल्य संवर्धन, प्रसंस्करण अवसंरचना तथा कृषि लॉजिस्टिक्स के विकास हेतु विभिन्न योजनाएँ संचालित की जा रही हैं। बागवानी के एकीकृत विकास मिशन (MIDH) तथा खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय की योजनाएँ फसल कटाई उपरांत प्रबंधन प्रणाली को सुदृढ़ बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दे रही हैं। इन योजनाओं का प्रभावी क्रियान्वयन एवं किसानों तक उनकी पहुँच सुनिश्चित करना आवश्यक है।

**6. कोल्ड चेन एवं भंडारण क्षमता का विस्तार :** भारत में सब्जियों का उत्पादन 221 मिलियन टन से अधिक होने के बावजूद उपलब्ध कोल्ड स्टोरेज क्षमता अभी भी अपर्याप्त है। मांग एवं आपूर्ति के बीच संतुलन बनाए रखने तथा मूल्य अस्थिरता को नियंत्रित करने के लिए आधुनिक कोल्ड चेन अवसंरचना में निवेश की आवश्यकता है। पर्याप्त भंडारण सुविधाएँ किसानों को उपयुक्त बाजार मूल्य मिलने तक उत्पाद सुरक्षित रखने में सहायता प्रदान करती हैं।

**7. सहकारी मॉडल एवं कृषक संगठनों को प्रोत्साहन :** सफल सहकारी संस्थाएँ एवं किसान उत्पादक संगठन ताजा उपज के संग्रहण, प्रसंस्करण, भंडारण तथा विपणन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। हिमाचल प्रदेश हॉर्टिकल्चर प्रोड्यूस मार्केटिंग एंड प्रोसेसिंग कॉर्पोरेशन (HPMC), महाग्रेप्स तथा महा–मैंगो जैसी संस्थाएँ इस दिशा में सफल उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। ऐसे मॉडल किसानों की सौदेबाजी क्षमता एवं बाजार पहुँच को सुदृढ़ बनाते हैं।

**8. प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन को बढ़ावा :** उत्पादन क्षेत्रों के निकट प्राथमिक प्रसंस्करण केंद्र, जूस एवं पल्प इकाइयाँ, निर्जलीकरण (Dehydration) इकाइयाँ तथा हिमीकरण (Freezing) इकाइयाँ स्थापित कर अधिशेष उत्पादन का मूल्य संवर्धन किया जा सकता है। इससे न केवल फसल कटाई उपरांत हानियाँ कम होती हैं, बल्कि किसानों के लिए अतिरिक्त आय के अवसर भी सृजित होते हैं।

**9. जागरूकता एवं विस्तार सेवाएँ :** किसानों के बीच पैकहाउस संचालन, ग्रेडिंग, पैकेजिंग, भंडारण, गुणवत्ता मानकों तथा खाद्य सुरक्षा नियमों के प्रति जागरूकता विकसित करना आवश्यक है। प्रभावी कृषि विस्तार सेवाएँ आधुनिक तुड़ाई उपरांत तकनीकों को अपनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

**फसल कटाई उपरांत हानियों को कम करने के लाभ :**

**1. किसानों की आय में वृद्धि:** हानियों में कमी से अधिक उपज बाजार तक पहुँचती है, जिससे किसानों को बेहतर मूल्य एवं अधिक लाभ प्राप्त होता है।

**2. खाद्य एवं पोषण सुरक्षा :** फल एवं सब्जियों की उपलब्धता बढ़ने से पोषक तत्वों की निरंतर आपूर्ति सुनिश्चित होती है तथा खाद्य सुरक्षा सुदृढ़ होती है।

**3. संसाधनों का संरक्षण :** जल, भूमि, उर्वरक एवं ऊर्जा जैसे कृषि संसाधनों का अधिक कुशल उपयोग संभव होता है।

**4. मूल्य स्थिरता :** वैज्ञानिक भंडारण एवं प्रसंस्करण द्वारा मांग–आपूर्ति संतुलित रहती है, जिससे मूल्य उतार–चढ़ाव कम होता है।

**5. रोजगार एवं निर्यात संवर्धन :** प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन गतिविधियाँ रोजगार सृजन के साथ–साथ निर्यात को भी बढ़ावा देती हैं।

**निष्कर्ष :** सब्जियाँ अत्यधिक नाशवान कृषि उत्पाद हैं, अतः उनकी गुणवत्ता एवं पोषण मूल्य को बनाए रखने के लिए वैज्ञानिक तुड़ाई उपरांत प्रबंधन अत्यंत आवश्यक है। प्री–कूलिंग, ग्रेडिंग, पैकेजिंग, कोल्ड चेन तथा उचित भंडारण तकनीकों के माध्यम से कटाई उपरांत होने वाली हानियों को प्रभावी रूप से कम किया जा सकता है। इन तकनीकों को अपनाने से न केवल किसानों की आय एवं उत्पादों की बाजार गुणवत्ता में वृद्धि होती है, बल्कि खाद्य एवं पोषण सुरक्षा को भी सुदृढ़ किया जा सकता है। इसलिए सतत एवं लाभकारी बागवानी विकास के लिए आधुनिक तुड़ाई उपरांत प्रबंधन प्रणालियों का व्यापक प्रसार और उपयोग आवश्यक है।

# खड़ीन सिंचाई प्रणाली का वैज्ञानिक एवं आर्थिक विश्लेषण : एक क्षेत्रीय अध्ययन
## ( पश्चिमी राजस्थान की पारंपरिक वर्षा जल संचयन तकनीक )

विजय गुर्जर[1], डॉ. विक्रम योगी[2], डॉ. के. सी. बैरवा[3], डॉ. शिरीष शर्मा[4], मदन गुर्जर[5] और दिलीप चौधरी[6]

**1. प्रस्तावना**

पश्चिमी राजस्थान का क्षेत्र मुख्यतः शुष्क एवं अर्ध-शुष्क जलवायु वाला है। यहाँ औसत वार्षिक वर्षा लगभग 100-400 मिमी के बीच होती है। वर्षा अनियमित, कम अवधि की तथा स्थान विशेष पर निर्भर होती है। उच्च तापमान, तीव्र वाष्पीकरण दर और सीमित भू-जल संसाधनों के कारण यहाँ कृषि उत्पादन सदैव चुनौतीपूर्ण रहा है।

इन कठिन परिस्थितियों में स्थानीय लोगों ने पारंपरिक ज्ञान के आधार पर जल संरक्षण की कई तकनीकें विकसित कीं। इन्हीं में से एक अत्यंत महत्वपूर्ण और प्रभावी तकनीक है कृषि खड़ीन सिंचाई प्रणाली। यह प्रणाली वर्षा जल को रोककर भूमि में समाहित करती है और उसी नमी के आधार पर कृषि उत्पादन संभव बनाती है।

**2. खड़ीन की परिभाषा**

खड़ीन एक पारंपरिक वर्षा जल संचयन एवं नमी संरक्षण प्रणाली है, जिसमें ढलान वाली भूमि के निचले भाग में मिट्टी या पत्थर का बाँध बनाकर वर्षा के बहाव को रोका जाता है। संचित जल धीरे-धीरे भूमि में अवशोषित होता है, जिससे मिट्टी में पर्याप्त नमी बनी रहती है और उसी के आधार पर रबी फसलें उगाई जाती हैं।

✓ "खड़ीन वह कृषि पद्धति है जिसमें वर्षा के बहते जल को रोककर भूमि की नमी बढ़ाई जाती है और बिना अतिरिक्त सिंचाई के फसल उत्पादन किया जाता है"

**3. इतिहास एवं विकास**

खड़ीन प्रणाली का विकास लगभग 15वीं शताब्दी में जैसलमेर क्षेत्र में पालीवाल ब्राह्मणों द्वारा किया गया था। यह प्रणाली स्थानीय स्थलाकृति, मिट्टी की प्रकृति और वर्षा की स्थिति को ध्यान में रखकर विकसित की गई थी।
जैसलमेर, बाड़मेर और बीकानेर क्षेत्रों में आज भी कई पुराने खड़ीन मौजूद हैं। कुछ खड़ीन सैकड़ों बीघा क्षेत्र में फैले हुए हैं। यह प्रणाली इस बात का प्रमाण है कि पारंपरिक भारतीय कृषि ज्ञान अत्यंत वैज्ञानिक और पर्यावरण अनुकूल था।

**4. भौगोलिक उपयुक्तता**

खड़ीन प्रणाली विशेष रूप से निम्न परिस्थितियों में सफल होती है

- कम से मध्यम वर्षा (100-400 मिमी)
- हल्की ढलान वाली भूमि
- दोमट या चिकनी दोमट मिट्टी
- दोमट या चिकनी दोमट मिट्टी
- कम जल निकास वाली मिट्टी
- बड़े खुले कैचमेंट क्षेत्र
- पश्चिमी राजस्थान की भौगोलिक संरचना इस प्रणाली के लिए अत्यंत उपयुक्त है।

**5. संरचना एवं घटक**

खड़ीन प्रणाली के मुख्य घटक निम्नलिखित हैं:

5.1 कैचमेंट क्षेत्र

ऊँचा भाग जहाँ वर्षा जल एकत्र होता है और ढलान के कारण नीचे की ओर बहता है।

5.2 बाँध

मिट्टी या पत्थर से बना अवरोध जो बहते जल को रोकता है।

ऊँचाई: 1-2 मीटर
लंबाई: 100-300 मीटर (या अधिक)

5.3 जल संचयन क्षेत्र

बाँध के पीछे का क्षेत्र जहाँ पानी रुकता है।

5.4 स्पिलवे

अधिक जल की निकासी हेतु सुरक्षित निकास मार्ग।

**6. कार्य सिद्धांत**

- वर्षा होने पर जल ऊँचे क्षेत्र से नीचे बहता है।
- बाँध के कारण जल रुक जाता है।
- जल धीरे–धीरे भूमि में अवशोषित होता है।
- मिट्टी की गहराई तक नमी पहुँचती है।

[1]विद्या वाचस्पती, कृषि अर्थशास्त्र विभाग [2,4]सहायक आचार्य, कृषि अर्थशास्त्र विभाग, [3]सह-आचार्य, कृषि अर्थशास्त्र विभाग, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर [5]स्नातकोत्तर, उद्यान विज्ञान विभाग, कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर
[6]विद्या वाचस्पती, सस्य विज्ञान विभाग, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर
Mobile no. 8107818349 Email : bZesy-vs123gujjar@gmail.com

- वर्षा समाप्त होने के बाद रबी फसल बोई जाती है।
- यह प्रणाली भू–जल पुनर्भरण में भी सहायक होती है।

**7. मिट्टी की गुणवत्ता एवं प्रभाव**

- खड़ीन क्षेत्र में जल के ठहराव से महीन कण जमा होते हैं।
- मिट्टी की उर्वरता बढ़ती है
- कार्बनिक पदार्थों की मात्रा में वृद्धि
- नमी धारण क्षमता में सुधार
- लवणता में कमी
- खड़ीन क्षेत्र की मिट्टी सामान्य वर्षा आधारित खेतों की तुलना में अधिक उत्पादक होती है।

**8. खड़ीन में उगाई जाने वाली फसलें**

| रबी फसलें | खरीफ फसलें (कम वर्षा में) |
|---|---|
| ❖ चना, सरसों | ❖ बाजरा |
| ❖ जीरा | ❖ ग्वार |
| ❖ इसबगोल, गेहूँ | ❖ मूंग |
| ❖ रबी फसलें अधिक सफल रहती हैं क्योंकि मिट्टी में पर्याप्त नमी संचित रहती है। | ❖ मोठ |

**9. उत्पादन पर प्रभाव**

**अध्ययनों के अनुसार:**

- उत्पादन में 2 से 4 गुना तक वृद्धि
- गेहूँ उत्पादन: 8-10 क्विंटल/हेक्टेयर से बढ़कर 15-20 क्विंटल/हेक्टेयर
- चना: 5-6 से बढ़कर 10-12 क्विंटल/हेक्टेयर
- यह वृद्धि मिट्टी की नमी और उर्वरता में सुधार के कारण होती है।

**10. तुलनात्मक अध्ययन**

खड़ीन प्रणाली प्राकृतिक और टिकाऊ समाधान प्रदान करती है।

| विशेषता | खड़ीन | नहर सिंचाई | साधारण वर्षा खेती |
|---|---|---|---|
| ❖ जल स्रोत | ❖ वर्षा संचयन | ❖ सीधी वर्षा | ❖ बाहरी जल |
| ❖ लागत | ❖ कम | ❖ बहुत कम | ❖ अधिक |
| ❖ उत्पादन | ❖ अधिक | ❖ कम | ❖ अधिक |
| ❖ भू–जल पुनर्भरण | ❖ उच्च | ❖ कम | ❖ कम |
| ❖ पर्यावरण प्रभाव | ❖ सकारात्मक | ❖ मध्यम | ❖ कभी–कभी नकारात्मक |

**11. आर्थिक विश्लेषण**

- ✓ निर्माण लागत अपेक्षाकृत कम
- ✓ रखरखाव सरल
- ✓ सामुदायिक भागीदारी संभव
- ✓ दीर्घकालिक लाभ
- ✓ कम लागत में अधिक उत्पादन के कारण यह प्रणाली आर्थिक रूप से लाभकारी है।

**12. पर्यावरणीय लाभ**

- ✓ मिट्टी कटाव में कमी
- ✓ भू–जल स्तर में वृद्धि
- ✓ जैव विविधता में सुधार
- ✓ मरुस्थलीकरण की रोकथाम

**13. चुनौतियाँ**

- ✓ अत्यधिक वर्षा से बाँध क्षति
- ✓ रखरखाव की आवश्यकता
- ✓ भूमि स्वामित्व विवाद
- ✓ आधुनिक तकनीकी मार्गदर्शन की कमी

**14. आधुनिक संदर्भ में महत्व**

आज जलवायु परिवर्तन और सूखे की बढ़ती समस्या के कारण खड़ीन जैसी पारंपरिक प्रणालियाँ अत्यंत महत्वपूर्ण हो गई हैं। यदि इसे वैज्ञानिक ढंग से पुनर्जीवित किया जाए तो यह पश्चिमी भारत के लिए दीर्घकालिक समाधान बन सकती है।

**15. निष्कर्ष**

खड़ीन सिंचाई प्रणाली पश्चिमी राजस्थान के शुष्क क्षेत्रों के लिए एक अत्यंत प्रभावी, पर्यावरण अनुकूल और आर्थिक रूप से व्यवहार्य जल प्रबंधन तकनीक है। यह पारंपरिक ज्ञान और वैज्ञानिक सिद्धांतों का उत्कृष्ट उदाहरण है।

यदि सरकार, कृषि विभाग और स्थानीय समुदाय मिलकर इसे बढ़ावा दें, तो यह भविष्य में जल संकट और सूखा प्रबंधन के लिए एक मॉडल प्रणाली सिद्ध हो सकती है।

# मूंग के प्रमुख रोग, लक्षण एवं उनका समेकित प्रबंधन

कमलेश चरपोटा[1], डॉ. मनीष कुमार[2]

## परिचय

मूंग भारत की प्रमुख दलहनी फसलों में से एक है। यह अल्पावधि में तैयार होने वाली, उच्च पोषण मूल्य वाली तथा मृदा की उर्वरता बढ़ाने वाली फसल है। इसके दानों में लगभग 22-25 प्रतिशत प्रोटीन, 55-60 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट तथा पर्याप्त मात्रा में खनिज लवण एवं विटामिन पाए जाते हैं। मूंग की खेती खरीफ, ग्रीष्म तथा कुछ क्षेत्रों में जायद मौसम में भी की जाती है। भारत विश्व के प्रमुख मूंग उत्पादक देशों में शामिल है, परंतु इसकी औसत उत्पादकता अभी भी संभावित स्तर से कम है। इसका प्रमुख कारण विभिन्न प्रकार के कवकीय, विषाणुजनित, जीवाणुजनित तथा सूत्रकृमि जनित रोग हैं। अनुकूल परिस्थितियों में ये रोग 20 से 100 प्रतिशत तक उपज हानि पहुँचा सकते हैं। इसलिए रोगों की सही पहचान, उनके कारकों की जानकारी तथा समेकित रोग प्रबंधन (IDM) की वैज्ञानिक तकनीकों का समन्वित उपयोग आवश्यक है। समेकित रोग प्रबंधन में रोगरोधी किस्मों का चयन, रोगमुक्त बीज, बीजोपचार, फसल चक्र, जैव-नियंत्रण, वानस्पतिक उत्पादों का उपयोग तथा आवश्यकता अनुसार रासायनिक फफूंदनाशियों एवं कीटनाशियों का विवेकपूर्ण प्रयोग शामिल है।

## भूमिका

आधुनिक कृषि तकनीकों एवं उन्नत किस्मों के प्रयोग से मूंग का उत्पादन बढ़ा है, फिर भी अनेक रोग इसके उत्पादन में प्रमुख बाधा बने हुए हैं। रोगजनकों का संक्रमण पौधे के अंकुरण से लेकर परिपक्वता तक किसी भी अवस्था में हो सकता है। रोगों के कारण पौधों की वृद्धि प्रभावित होती है, प्रकाश संश्लेषण कम हो जाता है, फलियों की संख्या एवं दानों का विकास घट जाता है तथा बीज की गुणवत्ता भी प्रभावित होती है। जलवायु परिवर्तन, अनियमित वर्षा, अधिक आर्द्रता तथा कीट वाहकों की बढ़ती संख्या के कारण रोगों की तीव्रता में निरंतर वृद्धि देखी जा रही है। ऐसी स्थिति में समेकित रोग प्रबंधन की अवधारणा अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है।

## मूंग के प्रमुख रोग

### 1. पीला चितकबरी रोग (Yellow Mosaic Disease)

पीला मोजेक रोग मूंग का सर्वाधिक विनाशकारी विषाणुजनित रोग है। भारत के लगभग सभी मूंग उत्पादक क्षेत्रों में यह रोग पाया जाता है। रोग का प्रमुख कारक मूंगबीन पीला मोजेक भारतीय विषाणु (MYMIV) अथवा मूंगबीन पीला मोजेक विषाणु (MYMV) है, जो बेगोमोवायरस समूह का सदस्य है। इसका प्रसार मुख्यतः सफेद मक्खी द्वारा होता है।

**पहचान:** प्रारम्भिक अवस्था में पत्तियों पर छोटे–छोटे पीले धब्बे दिखाई देते हैं जो बाद में पूरे पत्ते पर फैलकर पीले एवं हरे रंग का मोजेक पैटर्न बना देते हैं। रोगग्रस्त पौधों की वृद्धि रुक जाती है, फूल एवं फलियों की संख्या कम हो जाती है तथा दाने छोटे और सिकुड़े हुए बनते हैं। प्रारम्भिक संक्रमण होने पर उपज में 80-100 प्रतिशत तक हानि हो सकती है।

**रोग नियंत्रण:** रोग के प्रबंधन हेतु रोग रोधी या सहनशील किस्मों का चयन, समय पर बुवाई, रोगग्रस्त पौधों का निष्कासन, खरपतवार नियंत्रण तथा सफेद मक्खी का प्रभावी प्रबंधन आवश्यक है। बीजोपचार के साथ साथ नीम आधारित उत्पादों का उपयोग तथा आवश्यकता पड़ने पर इमिडाक्लोप्रिड 17.8% SL @ 0.3 ml/L, थायमेथोक्साम 25% WG @ 0.25 g/L अथवा एसीटामिप्रिड 20% SP @ 0.3 g/L जैसे अनुशंसित कीटनाशियों का प्रयोग किया जा सकता है।

### 2. सर्कोस्पोरा पत्ती धब्बा रोग (Cercospora Leaf Spot)

यह एक प्रमुख कवकीय रोग है जिसका कारक सर्कोस्पोरा कैनेसेन्स है। रोग बीज तथा संक्रमित पौध अवशेषों के माध्यम से फैलता है। अधिक आर्द्रता एवं मध्यम तापमान रोग के विकास के लिए अनुकूल होते हैं।

**पहचान:** रोग की शुरुआत पत्तियों पर छोटे भूरे धब्बों से होती है, जो बाद में बड़े होकर धूसर केन्द्र एवं गहरे भूरे किनारों वाले धब्बों में परिवर्तित हो जाते हैं। अधिक संक्रमण की स्थिति में पत्तियाँ समय से पूर्व झड़ जाती हैं तथा प्रकाश संश्लेषण प्रभावित होता है।

विद्या वाचस्पति छात्र[1], सहायक आचार्य[2] कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर
ईमेल: kamleshkumarmeena70@gmail.com

**रोग नियंत्रण:** रोग प्रतिरोधी अथवा सहनशील किस्मो जैसे पंत मूंग-3, पूसा विशाल, बसंती, एमएल-5, एमएल-337, पीडीएम-54, सम्राट टी.जे.एम.-3, के-851, पन्त मूंग-2, पूसा विशाल, एच.यू. एम.-1 का चयन करे। प्रमाणित एवं स्वस्थ बीजो का प्रयोग करें। रोग नियंत्रण के लिए प्रमाणित बीज का उपयोग, बीजोपचार, फसल चक्र तथा खेत की स्वच्छता आवश्यक है। जैविक नियंत्रण हेतु ट्राइकोडर्मा विरिडी @ 2.5 किग्रा प्रति 100 किलोग्राम सड़ी हुई गोबर की खाद में मिलाकर उपयोग करें। ट्राइकोडर्मा हार्जियानम @ 10 ग्राम प्रति किलो के हिसाब से बीज उपचार करें।

आवश्यकता पड़ने पर मैंकोजेब 75% WP @ 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी के हिसाब से उपयोग करें। कार्बेन्डाजिम 50% WP @ 0.1% अथवा टेबुकोनाजोल 25.9% EC @ 0.1% के हिसाब से छिड़काव करें।

**3. श्यामवर्ण रोग (Anthracnose)**

रोग का प्रमुख कारक कोलेटोट्राइकम ट्रंकेटम है। यह रोग विशेष रूप से अधिक वर्षा एवं आर्द्रता की परिस्थितियों में गंभीर रूप धारण करता है।

**पहचान:** संक्रमित पौधों की पत्तियों, तनों तथा फलियों पर गहरे भूरे से काले रंग के धँसे हुए धब्बे बनते हैं। रोग की तीव्रता बढ़ने पर फलियाँ सूख जाती हैं तथा बीजों का विकास प्रभावित होता है।

**रोग नियंत्रण:** समेकित प्रबंधन के अंतर्गत रोगमुक्त बीज, बीजोपचार, संक्रमित अवशेषों का नष्ट करना तथा ट्राइकोडर्मा हार्जियानम का उपयोग लाभकारी है। आवश्यकता अनुसार कार्बेन्डाजिम 50% WP @ 0.1% एवं कार्बेन्डाजिम 12% WP + मैंकोजेब 63% WP @ 0.2% का मिश्रित छिड़काव प्रभावी नियंत्रण प्रदान करता है।

**4. चूर्णिल आसिता (Powdery Mildew)**

यह रोग एरिसिफे पॉलीगोनी नामक कवक द्वारा उत्पन्न होता है। सामान्यतः यह रोग फसल की अंतिम अवस्थाओं में अधिक दिखाई देता है तथा शुष्क मौसम और मध्यम तापमान इसकी वृद्धि के लिए अनुकूल होते हैं।

**पहचान:** इस रोग की पहचान पत्तियों, तनों तथा फलियों पर सफेद चूर्ण जैसे कवकीय आवरण से होती है। धीरे-धीरे संक्रमित भाग पीले होकर सूखने लगते हैं, जिससे पौधे की प्रकाश संश्लेषण क्षमता घट जाती है और दानों का विकास प्रभावित होता है।

**रोग नियंत्रण:** इस रोग प्रबंधन के लिए संतुलित पोषण, उचित दूरी पर बुवाई तथा संक्रमित पौध अवशेषों का नष्ट करना आवश्यक है। जैविक नियंत्रण में एम्पेलोमाइसीस क्विसक्वालिस उपयोगी है, जबकि गंधक 80% WP @ 0.25%, हेक्साकोनाजोल 5% EC @ 0.1%, टेबुकोनाजोल 25.9% EC @ 0.1% के हिसाब से छिड़काव करें।

**5. वेब झुलसा रोग (Web Blight)**

वेब झुलसा रोग का कारक राइजोक्टोनिया सोलानी है। यह रोग अधिक आर्द्रता एवं सघन फसल में तेजी से फैलता है।

**पहचान:** रोग के प्रारम्भिक लक्षण पत्तियों पर जलसिक्त भूरे धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं। बाद में पत्तियाँ जाल जैसी फफूंदी से ढक जाती हैं तथा संक्रमण तनों एवं फलियों तक फैल जाता है। गंभीर अवस्था में पौधे सूखने लगते हैं।

**रोग नियंत्रण:** इस रोग के नियंत्रण हेतु उचित पौध दूरी, जल निकास, फसल अवशेषों का नष्ट करना जैविक नियंत्रण हेतु ट्राइकोडर्मा विरिडी @ 2.5 किग्रा प्रति 100 किलोग्राम सड़ी हुई गोबर की खाद में मिलाकर उपयोग करें। ट्राइकोडर्मा हार्जियानम @ 10 ग्राम प्रति किलो के हिसाब से बीज उपचार करें। आवश्यकता पड़ने पर एजोक्सीस्ट्रोबिन 18.2% + टेबुकोनाजोल 11.4% SC @ 0.1%, ट्राइफ्लॉक्सीस्ट्रोबिन 25% + टेबुकोनाजोल 50% WG @ 0.4g/L, हेक्साकोनाजोल 5% EC @ 0.1%, कार्बेन्डाजिम 50% WP @ 0.1% अथवा टेबुकोनाजोल 25.9% EC @ 0.1% के हिसाब से छिड़काव करें।

**6. चारकोल रॉट / शुष्क जड़ सड़न (Charcoal Rot/ Dry root rot)**

चारकोल रॉट का कारक मैक्रोफोमिना फेजियोलिना है। जड़ सड़न मुख्यतः राइजोक्टोनिया बैटाटिकोला / फ्यूजेरियम सोलानी द्वारा उत्पन्न होता है। यह रोग विशेष रूप से सूखे एवं उच्च तापमान की परिस्थितियों में अधिक पाया जाता है।

**पहचान:** इस रोग के कारण संक्रमित पौधे अचानक मुरझाने लगते हैं। जड़ों एवं तनों के भीतर छोटे छोटे काले स्क्लेरोशिया बनने के कारण ऊतक काले दिखाई देते हैं। अंततः पौधे सूख जाते हैं। इस रोग के कारण जड़ें सड़ जाती हैं,

पौधे पीले पड़ जाते हैं तथा अंततः मुरझाकर सूख जाते हैं। यह रोग विशेष रूप से जल निकास की खराब व्यवस्था वाले खेतों में अधिक पाया जाता है।

**रोग नियंत्रण:** रोग प्रबंधन में संतुलित सिंचाई, फसल चक्र, जैविक खादों का प्रयोग तथा ट्राइकोडर्मा विरिडी तथा ट्राइकोडर्मा हार्जियानम @ 10 ग्राम प्रति किलो के हिसाब से बीज उपचार करें। खेत में जैविक पदार्थों की पर्याप्त मात्रा रोग की तीव्रता कम करने में सहायक होती है। समेकित प्रबंधन में बीजोपचार, संतुलित सिंचाई, उचित जल निकास तथा आवश्यकता पड़ने पर कार्बेन्डाजिम 50% WP द्वारा ड्रेंचिंग प्रभावी रहती है।

**7. जीवाणु पत्ती धब्बा (Bacterial Leaf Spot)**

यह रोग जैंथोमोनास ऐक्सोनोपोडिस पीवी. विग्नी नामक जीवाणु द्वारा होता है।

**पहचान:** पत्तियों पर छोटे जलसिक्त धब्बे बनते हैं जो बाद में भूरे होकर पीले प्रभामंडल से घिर जाते हैं। रोग की तीव्रता बढ़ने पर पत्तियाँ सूख जाती हैं।

**रोग नियंत्रण:** इस रोग के नियंत्रण के लिए रोगमुक्त बीज, फसल अवशेषों का नष्ट करना तथा कॉपर आधारित जीवाणुनाशियों का प्रयोग लाभदायक है। कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 50% WP, कॉपर हाइड्रॉक्साइड 77% WP, कॉपर ऑक्साइड 50% WP @ 2 ग्राम प्रति लीटर पानी के हिसाब से छिड़काव करें।

**समेकित रोग प्रबंधन (Integrated Disease Management)**

मूंग में रोग प्रबंधन केवल रासायनिक नियंत्रण तक सीमित नहीं होना चाहिए। रोगमुक्त एवं प्रमाणित बीज का उपयोग, बीजोपचार, संतुलित उर्वरक प्रबंधन, समय पर बुवाई, उचित पौध दूरी, खेत की स्वच्छता, फसल चक्र तथा जल निकास की व्यवस्था रोगों की रोकथाम के मूल आधार हैं। जैव–एजेंट जैसे ट्राइकोडर्मा विरिडी, ट्राइकोडर्मा हार्जियानम, स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस, ब्यूवेरिया बैसियाना का उपयोग रोगजनकों की संख्या कम करने में सहायक होता है। नीम आधारित उत्पादों का उपयोग रोग एवं कीट दोनों के प्रबंधन में उपयोगी है। रोग की आर्थिक क्षति सीमा पार होने पर ही अनुशंसित रसायनों का वैज्ञानिक मात्रा एवं समय पर प्रयोग किया जाना चाहिए। इससे उत्पादन लागत कम होती है, पर्यावरण सुरक्षित रहता है तथा रासायनिक अवशेषों की समस्या भी कम होती है।

**निष्कर्ष**

मूंग की सफल एवं लाभकारी खेती के लिए रोगों की सही पहचान तथा उनका समेकित प्रबंधन अत्यंत आवश्यक है। वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन, असंतुलित पोषण तथा एकल फसल प्रणाली के कारण रोगों की समस्या लगातार बढ़ रही है। इसलिए केवल रासायनिक नियंत्रण पर निर्भर रहने के बजाय सांस्कृतिक, जैविक, वानस्पतिक एवं रासायनिक उपायों का समन्वित उपयोग ही दीर्घकालीन एवं टिकाऊ समाधान प्रदान करता है। समेकित रोग प्रबंधन अपनाने से रोगों की तीव्रता कम होती है, पर्यावरण संरक्षण होता है, उत्पादन एवं बीज गुणवत्ता में सुधार होता है तथा किसानों की आय में उल्लेखनीय वृद्धि की जा सकती है।

**लेखक अपने आलेख**
**dee@raubikaner.org / rajeshvermasct@gmail.com**
**पर हिन्दी फोन्ट कृतिदेव 10 में वर्ड फाईल व पीडीएफ दोनों में भिजवाने का श्रम करें।**

# राजस्थान कृषक समर्थन योजना : किसानों के आर्थिक सशक्तिकरण की पहल

निकिता कुमारी मील*, श्वेता श्रीवास्तव

**परिचय :**

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ बड़ी संख्या में लोगों की आजीविका कृषि पर निर्भर करती है। राजस्थान जैसे विशाल कृषि राज्य में किसानों की आय और आर्थिक सुरक्षा सुनिश्चित करना राज्य सरकार की प्राथमिक जिम्मेदारियों में से एक है। कृषि उत्पादन में वृद्धि होने के बावजूद किसानों को कई बार अपनी उपज का उचित मूल्य प्राप्त नहीं हो पाता, जिसके कारण उनकी आय प्रभावित होती है। इस समस्या के समाधान के लिए केंद्र सरकार न्यूनतम समर्थन मूल्य की व्यवस्था करती है, ताकि किसानों को उनकी फसल का न्यूनतम लाभकारी मूल्य प्राप्त हो सके।

किसानों को और अधिक आर्थिक सहायता प्रदान करने तथा उनकी आय में वृद्धि करने के उद्देश्य से राजस्थान सरकार ने राजस्थान कृषक समर्थन योजना प्रारम्भ की है। इस योजना के अंतर्गत राज्य सरकार गेहूँ की सरकारी खरीद पर केंद्र सरकार द्वारा घोषित न्यूनतम समर्थन मूल्य के अतिरिक्त ₹150 प्रति क्विंटल बोनस प्रदान करती है। वर्ष 2026 के लिए गेहूँ का न्यूनतम समर्थन मूल्य ₹2,585 प्रति क्विंटल निर्धारित किया गया है। इस प्रकार योजना के अंतर्गत किसानों को न्यूनतम समर्थन मूल्य के अतिरिक्त आर्थिक लाभ प्राप्त होता है, जिससे उनकी आय में उल्लेखनीय वृद्धि होती है।

यह योजना न केवल किसानों को उनकी उपज का बेहतर मूल्य उपलब्ध कराती है, बल्कि सरकारी खरीद प्रणाली को भी मजबूत बनाती है। साथ ही, प्रत्यक्ष लाभ अंतरण के माध्यम से भुगतान की व्यवस्था होने से पारदर्शिता बढ़ती है और किसानों को समय पर भुगतान सुनिश्चित होता है।

**योजना की आवश्यकता**

कृषि क्षेत्र अनेक प्रकार की चुनौतियों का सामना करता है। मौसम की अनिश्चितता, उत्पादन लागत में वृद्धि, बाजार मूल्यों में उतार–चढ़ाव तथा बिचौलियों की भूमिका किसानों की आय को प्रभावित करती है। कई बार किसान अपनी उपज को मजबूरी में कम कीमत पर बेचने के लिए विवश हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में न्यूनतम समर्थन मूल्य व्यवस्था किसानों को न्यूनतम मूल्य की गारंटी प्रदान करती है। हालाँकि बढ़ती उत्पादन लागत को देखते हुए केवल न्यूनतम समर्थन मूल्य पर्याप्त नहीं माना जाता। इसलिए राजस्थान सरकार ने किसानों को अतिरिक्त आर्थिक सहायता प्रदान करने के लिए बोनस की व्यवस्था की है। इससे किसानों को उनकी मेहनत का बेहतर प्रतिफल प्राप्त होता है और कृषि गतिविधियों को प्रोत्साहन मिलता है। यह योजना किसानों के आर्थिक सशक्तिकरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

**योजना के उद्देश्य:**

- किसानों को उनकी उपज का लाभकारी एवं उचित मूल्य उपलब्ध कराना।
- किसानों की आय में वृद्धि कर उनकी आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ बनाना।
- सरकारी खरीद केंद्रों के माध्यम से गेहूँ की बिक्री को प्रोत्साहित करना।
- किसानों को पारदर्शी और समयबद्ध भुगतान सुनिश्चित करना।
- कृषि क्षेत्र में आर्थिक स्थिरता और उत्पादन वृद्धि को बढ़ावा देना।
- किसानों को बिचौलियों और शोषणकारी बाजार व्यवस्था से राहत प्रदान करना।
- डिजिटल एवं पारदर्शी खरीद प्रणाली के माध्यम से सुशासन को बढ़ावा देना।

**योजना की प्रमुख विशेषताएँ**

- केंद्र सरकार के न्यूनतम समर्थन मूल्य के अतिरिक्त ₹150 प्रति क्विंटल बोनस प्रदान किया जाता है।

भारतीय खाद्य निगम, खाद्य भंडारण डिपो, जालौर, राजस्थान (343001) *ईमेलः nkmeel2003@gmail.com

- बोनस राशि सीधे किसान के जनाधार से जुड़े बैंक खाते में प्रत्यक्ष लाभ अंतरण के माध्यम से भेजी जाती है।
- योजना का लाभ केवल सरकारी खरीद केंद्रों पर गेहूँ बेचने वाले किसानों को मिलता है।
- पूरी प्रक्रिया ऑनलाइन पंजीकरण आधारित है, जिससे पारदर्शिता सुनिश्चित होती है।

**पात्रता**: योजना का लाभ प्राप्त करने के लिए किसान को निम्नलिखित पात्रता शर्तों को पूरा करना आवश्यक हैकृ

- किसान राजस्थान का स्थायी निवासी हो।
- उसके पास वैध जनाधार कार्ड हो।
- बैंक खाता जनाधार से लिंक हो।
- किसान ने निर्धारित पोर्टल पर ऑनलाइन पंजीकरण कराया हो।
- भूमि स्वामित्व अथवा खेती से संबंधित आवश्यक दस्तावेज उपलब्ध हों।
- पट्टे पर खेती करने वाले किसानों को निर्धारित दस्तावेज या स्व–घोषणा पत्र प्रस्तुत करना होगा।

**आवश्यक दस्तावेज**: योजना में आवेदन करने के लिए निम्नलिखित दस्तावेजों की आवश्यकता होती है

1. जनाधार कार्ड
2. बैंक पासबुक की प्रति
3. भूमि संबंधी दस्तावेज (गिरदावरी)
4. पट्टे पर खेती होने की स्थिति में किरायानामा या स्व–घोषणा पत्र
5. मोबाइल नंबर
6. अन्य आवश्यक दस्तावेज, यदि विभाग द्वारा मांगे जाएँ

**आवेदन प्रक्रिया** : राजस्थान कृषक समर्थन योजना के अंतर्गत आवेदन की प्रक्रिया सरल और डिजिटल है। इसके प्रमुख चरण निम्नलिखित हैं

चरण 1: ऑनलाइन पंजीकरण : किसान खाद्य एवं नागरिक आपूर्ति विभाग के पोर्टल पर जाकर अपना पंजीकरण करता है।

चरण 2: विवरण दर्ज करना : पंजीकरण के दौरान जनाधार संख्या, बैंक खाता विवरण तथा भूमि संबंधी जानकारी दर्ज की जाती है।

चरण 3: खरीद केंद्र का चयन : किसान अपनी सुविधा के अनुसार निर्धारित खरीद केंद्र का चयन करता है।

चरण 4: टोकन जारी होना : पंजीकरण सफल होने के बाद किसान को sms के माध्यम से टोकन और खरीद की तिथि की सूचना प्राप्त होती है।

चरण 5: उपज की बिक्री : निर्धारित तिथि पर किसान खरीद केंद्र पर पहुँचकर अपनी गेहूँ की उपज बेचता है।

चरण 6: भुगतान प्राप्त करना : उपज का मूल्य तथा बोनस राशि सीधे किसान के बैंक खाते में जमा कर दी जाती है।

### किसानों को होने वाले लाभ

- न्यूनतम समर्थन मूल्य के अतिरिक्त बोनस मिलने से किसानों की आय में वृद्धि होती है।
- भुगतान सीधे बैंक खाते में आने से बिचौलियों की भूमिका समाप्त होती है।
- पारदर्शी एवं समयबद्ध भुगतान प्रणाली विकसित होती है।
- किसानों को अपनी उपज का उचित मूल्य प्राप्त होता है।

### निष्कर्ष

राजस्थान कृषक समर्थन योजना राज्य के किसानों के लिए एक महत्वपूर्ण और लाभकारी पहल है। यह योजना किसानों को उनकी गेहूँ की उपज का बेहतर मूल्य उपलब्ध कराकर उनकी आय बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। न्यूनतम समर्थन मूल्य के अतिरिक्त ₹150 प्रति क्विंटल बोनस किसानों को आर्थिक सुरक्षा प्रदान करता है और कृषि को अधिक लाभकारी बनाता है।

प्रत्यक्ष लाभ अंतरण, ऑनलाइन पंजीकरण तथा पारदर्शी खरीद व्यवस्था जैसी विशेषताओं के कारण यह योजना किसानों के विश्वास को मजबूत करती है। कुल मिलाकर, राजस्थान कृषक समर्थन योजना न केवल किसानों के आर्थिक सशक्तिकरण का माध्यम है, बल्कि राज्य के कृषि विकास और ग्रामीण समृद्धि की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम भी है।

# सितम्बर माह के कृषि कार्य

**डॉ. एन. के. शर्मा**, निदेशक अनुसंधान
स्वा. के. रा. कृ. वि., बीकानेर

**सस्य विज्ञान :– प्रभावी बिन्दू :– (1) फसलों में सिंचाई (2) खरपतवार नियंत्रण (3) उर्वरक प्रयोग**

**बाजरा** :– आगामी माह में अधिकांश खरपतवारों के बीज जो बने हैं। वे पक कर झड़ने से पूर्व उखाड़ कर खेत से बाहर निकालकर नष्ट करें। आगिया या रुखड़ी (स्ट्राइगा नामक खरपतवार) के प्रकोप वाले खेत चिन्हित करें। जिससे अगले साल उपयुक्त फसल चक्र अपनाया जा सके। ऐसे खेतों से उत्पादित फसल के बीज आगामी साल में काम में नहीं लिया जाना चहिये। सिंचित बाजरे की फसल में आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। बाजरे की फसल में सिट्टा निकलते समय एवं दाना भरते समय भूमि में पानी की कमी से उत्पादन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। अतः सिंचाई सुविधा उपलब्ध हो तो सिंचाई अवश्य करें। बाजरे की देर से बोई गई फसल में जहॉ नत्रजन की शेष आधी मात्रा का प्रयोग नहीं किया गया हो तो उपयुक्त अवस्था को देखते हुए 30 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर के हिसाब से नत्रजन दिया जा सकता है।

**कपास** :– कपास फसल में पुष्पकलिका निकलने की अवस्था का विशेष महत्व है। ऐसी कलिकांए ही मात्र फल शाखाओं में विकसित होती है। पार्श्व शाख से नहीं। इस अवस्था में सिंचाई नहीं होने पर नव विकसित फूल एवं फल नहीं पनपते और अक्सर डोड़ें झड़ने लगते है अर्थात आवश्यक हो तो सिंचाई अवश्य करें। कपास के खेत को खरपतवार रहित रखना चाहिये जहॉं तक की फसल में अन्य किस्म के पौधे भी नहीं होनें चाहिये। यदि ऐसा है तो गुणवत्ता पर बुरा प्रभाव पड़ता है और बाजार में भाव कम मिलता है। कलिका बनने की अवस्था तक नत्रजन की शेष आधी मात्रा का प्रयोग अवश्य किया जाना चाहियें। पैरामिल्ट के नियंत्रण के लिए कोबाल्ट क्लोराइड 10 पीपीएम + सोडियम बैन्जोईट 50 पीपीएम + 1.5 यूरिया + 1.5 प्रतिशत कैल्शियम क्लोराईड + 2 ग्राम ईको प्रति लीटर के हिसाब से 24 घंटे के भीतर छिड़काव करें।

**मूंगफली, ग्वार, मोठ एवं तिल** :– सिंचाई सुविधा वाली फसलों में आवश्यकतानुसार सिंचाई अवश्य करें इस समय अधिंकाश फसले फल विकास अवस्था में होती है उपज वृद्धि के लिये सिंचाई आवश्यक है। मूंगफली में सुइंया बनने की तथा फलियां विकसित होने की अवस्था सिंचाई के लिये अत्यन्त संवेदनशील अवस्था है अतः सिंचाई अवश्य करें। फसलों से खरपतवार बीज बनने से पूर्व नष्ट करें।

**कीट विज्ञान :– नरमा व देसी कपास** :– (अ) समय : सितम्बर के दूसरे सप्ताह में। चित्तीदार, गुलाबी व अमेरिकन लट। नियंत्रण हेतु फेनवलरेट 20 ई.सी. या डेल्टामेथ्रिन 2.8 ई.सी. 1.0 मि.ली./लीटर या क्यूनालफास 25 ई.सी. 20 मि.ली. या इन्डोक्साकर्ब 14.5 एस.सी. के साथ छिड़काव करें। तीसरे व चौथे छिड़काव में सिंथेटिक पाइरेथ्रोइड का लगातार प्रयोग न करें। (ब) हरा तेला सफेद मक्खी या अन्य रस चूसने वाले कीट का प्रकोप हो तो मोनोक्रोटोफोस 2.0 मिली. या एसीफेट 2.0 ग्राम या नीमयुक्त रसायन + तरल साबुन 5 मिली + 1 मिली या ट्राइजोफोस 2.5 मिली प्रति लीटर पानी का घोल बनाकर छिड़काव करें।

I. बी टी कॉटन के रस चूसने वाले कीटों का नियंत्रण हेतु –

1- इमिडाक्लोप्रिड 200 मिली 0.3 मिली/लीटर पानी
2- थायामिथोक्जाम 25 डब्ल्यूजी 0.5 मिली/लीटर पानी
3- एसीटामाइप्रिड 20 एसजी 0.4 मिली/लीटर पानी
4- थायोक्लोराइड 240 एसजी 1.0 मिली/लीटर पानी
5- डाइफैन्थूरान 50 डब्ल्यूजी 2.0 मिली/लीटर पानी

**मूंगफली व अन्य खरीफ की अधिकांश फसलों में सफेद लट का प्रकोप** :– खड़ी फसल में सफेद लट या दीमक का प्रकोप हो तो 800 से 1000 मि.ली. क्लोरोपाइरीफास 20 ई.सी. या क्यूनालफोस 25 ई.सी. या 75 मिली इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. प्रति बीघा की दर से सिंचाई के साथ देवे।

**ग्वार की फसल** :– तेले का प्रकोप हो तो डाइमेथोएट या मोनोक्रोटफास 36 एस.एल. का 250 मि.ली. प्रति बीघा की दरे से छिड़काव करें।

II. इनके अतिरिक्त इमिडाक्लोप्रिड (3मिली/10 लीटर

पानी) या एसीटामाप्रिड (2ग्राम/10 लीटर पानी) या कार्बोसल्फान (1.0 मिली/10 लीटर पानी) घोलकर छिड़काव करें।

**भिण्डी** :– चित्तीदार लट का प्रकोप देखा गया है इससे बचाव हेतु फनेवलरेट या साइपरमेथ्रिन 25 ई.सी. का आधा मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। ध्यान रहे फल को 15 दिन तक न तोड़े।

**कुष्माण्ड कुल की सब्जियाँ** :– लाल भृंग:यह अंकुरित व नई पत्तियों को खाकर छलनी का देता है। कार्बेरिल 5 प्रतिशत या मिथाइल पेराथियॉन 2 प्रतिशत का 25किलो प्रति है की दर से भूरकाव करें या एसीफेट 0.5 ग्राम/लीटर का छिड़काव करें। **फलमक्खी** :– इसकी गिढार फलों को काना कर देती है। मिलाथियान 50 ई.सी. या डाइमेथोएट 30 इ.सी. का एक मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। फसल को 10 दिन तक न तोड़े।

**पौध व्याधि** :– **बाजरा** :– (1) तुलासिता रोग :– यह रोग स्कलेरोस्पोरा ग्रेमिनिकोला नामक कवक द्वारा फैलता हे। जो पौधे की छोटी अवस्था पर ही देखा जा सकता है। पत्तियां आंशिक या पूर्णतः पीली या सफेद हो जाती है। देर से निकलने वाली पत्तियां पहले वाली पत्तियों की अपेक्षा अधिक पीली होती है। पत्तियों पर पीली धारियां बनती है। फलस्वरुप पत्तियां सिरे से फटने लगती है नम वातावरण मे पत्ती के नीचले भाग पर आसित के सफेद तन्तु देखे जा सकते है। प्रथम संक्रमण भूमि में पड़े गत वर्ष के रोगग्रस्त पत्तों के कारण एवं द्वितीय संक्रमण वायु व कीटों द्वारा होता है। रोकथाम हेतु रोग के प्रथम लक्षण दिखने पर मैकोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी का घोल बनाकर छिड़काव करें। (2) अरगट रोग :– यह रोग बाली आने की अवस्था पर आता है। माह सितम्बर में इसका प्रकोप नहीं होता है।

**मूंग व मोठ** :– इस फसल की बुवाई लगभग हो चुकी है देरी से बोई जाने वाली फसल के बीजों को 2 ग्राम कार्बेडेजिम से उपचारित करके ही बुवाई करें। उन्नत किस्में आर.एम.ओ.–40, 225, 257 एव 435 की ही बुवाई करें। जो कि विषाणु रोधी किस्में है मूंग में के–851 एवं एस. एम. एल. –668, आर. एम. जी.–268 की ही बुवाई करें। प्रमुख रोग :– विषाणु जनित पीला मोजेक रोग जो कि जैमिनी वायरस द्वारा फैलता है। रोग का फैलाव सफेद मक्खी रोगी पौधे में विषाणु चूस कर स्वस्थ पौधों तक पहुँचाती है।

**रोकथाम** :– रोग के लक्षण दिखाई पड़ते ही रोगोर या मेटासिस्टोक्स 2 मि.ली. प्रति लीटर पानी के घोल के हिसाब से 15 दिन के अन्तराल पर दो छिड़काव करें।

**चित्ती जीवाणु रोग** :– मूंग एवं मोठ में यह रोग जेन्थोमोनास नामक जीवाणु द्वारा फैलता है। इस रोग में छोटे गहरे भूरे रंग के धब्बे पत्तों पर तथा प्रकोप बढ़ने पर फलियों और तनों पर भी दिखाई देता है फलस्वरुप पौधा मुरझा जाता है। लक्षण दिखाई देते ही एग्रीमाइसीन 2 ग्राम/10 लीटर पानी में या कॉपर आक्सीक्लोराइड 3 ग्राम/लीटर पानी में घोल बनाकर 15 दिन के अन्तर पर दो छिड़काव करें।

**ग्वार** :– देरी से बोये जाने वाले ग्वार को जड़ सड़न (मेक्रोफोमिना एवं एस्परजीलस) से बचाव हेतु बुवाई से पूर्व कार्बेडिजम 2 ग्राम प्रति किलो बीज दर से उपचारित करें।

**अंगमारी एवं झूलसा रोग** :– यह रोग माह अगस्त के अन्त में दिखाई पड़ जाता है जेन्थोमोनास जीवाणु जनित रोग की रोकथाम हेतु स्ट्रेप्टोसाइक्लीन 100 पी.पी.एम. (यानि 10 लीटर पानी में एक ग्राम दवा) व कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 0.2% का छिड़काव लक्षण दिखाई पड़ने पर ही करें।

**तिल** :– अंगमारी एवं झूलसा रोग से बचाव हेतु दर्शाये गये रोकथाम का उपाय करे।

**मूंगफली** :– **टिक्का रोग** :– यह रोग सरकोस्पोरा एरेचीडीकोला एवं स.परसोनाटा नामक दो कवकों द्वारा फैलता है। रोग के लक्षण वातावरण में नमी आद्रता बढ़ने पर देखे जा सकते है दोनो कवकों के लक्षण भिन्न–भिन्न होते है।

स. एरेचीडीकोला :– अगेती पर्ण चित्ती, बड़े धब्बे, गोलाकार व अनियमित आकार, व्यास 4–10 एम.एम., ऊपरी सतह पर।

स. परसोनाटा :– पछेती पर्ण चित्ती, धब्बे छोटे, गोलाकार, व्यास 1–8 एम.एम. गहरे भूरे रंग के ऊपरी एवं निचली दोनो सतह पर कवक संक्रमण प्रायः बाहरी त्वचा की कोशिकाओं के वेधन अथवा रन्ध्रों द्वारा प्रवेश से होता है। पछेती पर्ण चित्ती हानिकारक होती है। **रोकथाम** :– लक्षण दिखाई पड़ते ही मैकोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी के घोल का

छिड़काव 15 दिन के अन्तराल पर दो बार करें। जड़ सड़न एवं काला रोग का प्रकोप हो तो दानेदार कार्बेडिजम 3–4 किलो प्रति बीघा भूरकाव करें।

**कपास एवं नरमा** :– (1) ब्लेक आर्म (जीवाणु अंगमारी रोग – रोग जनक जेन्थोमोनास मालवेशियरम नामक जीवाणु। रोकथाम :– रोग के लक्षण दिखते ही 6 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन+300 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड प्रति बीघा के हिसाब से घोल बनाकर छिड़काव करें। छिड़काव 60 दिन, 80 दिन व 100 दिन पर दोहराना चाहिये। (2) लीफ कर्ल वीषाणु रोग :– लक्षण पत्तियों पर दिखाई पड़ते है। यह रोग जैमिनी वायरस द्वारा फैलता हे। सफेद मक्खी नामक कीट रोग को फैलाने का कार्य करता है।लक्षण दिखाई पड़ते ही मेटासिस्टॉक्स 0.03 प्रतिशत घोल का छिड़काव 15 दिन के अन्तराल पर दो बार करे

**सब्जियों के रोग** :– कद्दू, लौकी, ककड़ी, टिंडा, तौरई आदि।(1) झूलसा रोगः– जनक–कवक–अल्टरनेरिया कूकूमेरिना। **रोकथाम** :– मेन्कोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी का छिड़काव। (2) छाछिया रोगः– कवक–एरीसाइफी साइकोरेसिएरम। रोकथामः केराथियान एल.सी.–1 मि.ली. प्रति लीटर पानी के घोल का छिड़काव। (3) मोजेक रोगः– जनक–सी.एम.वी. विषाणु, रोग का फैलाव/संचरण सफेद मक्खी, एफीड द्वारा, पत्तियों पर पीले धब्बे, एवं सिकुड़न हो जाती है। फल आकार में टेढ़े–मेढ़े एवं कम संख्या में बनते है।रोकथामः मेलाथियान 2 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी के घोल का छिड़काव। (4) जीवाणु पत्ती धब्बा रोग :– जनक–जेन्थोमोनास कूकूरवीटी जीवाणुं।रोकथामः 100 पी. पी.एम., 100 एम.जी. स्ट्रेप्टोसाइक्लिन+0.3 प्रतिशत कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का छिड़काव।

**फलों के रोग** :– निम्बू का कैंकर रोग :– रोगजनक – जेन्थोमोनास सीट्राई। रोकथामः 250 मिलीग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन+3ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का प्रति लीटर पानी के घोल का 20 दिन के अन्तराल पर छिड़काव। ऑवला : फ्यूजेरियम विल्ट–कवक–फ्यूजेरियम ऑक्सीस्पोरम पौधे सूख कर मुरझाने लगते है। लक्षण दिखते ही विटावेक्स 2 ग्राम प्रति लीटर पानी के घोल को पौधे की जड़ों की निचले सतह तक पहुँचावे।

**उद्यानिकी** :– इस माह फल वृक्षारोपण के लिये गड्ढ़ों में पौधे लगाने का कार्य करना चाहिये। फल पौधों के चयन के बाद योजनानुसार वर्गाकार विधि से पौधे लगाये। पौधे लगाने के पहले 50 ग्राम क्यूनालफॉस (1.5 प्रतिशत) गड्ढ़े की मिट्टी में अच्छी तरह मिला देवें। इसके बाद ही आवश्यक चयनित पौधे गड्ढ़ों में लगाये। इस क्षेत्र में मुख्यतः बेर, अनार, लसोड़ा, नींबू, माल्टा व खजूर के पौधे लगाने चाहिये। जिनकी किस्म व दूरी निम्न प्रकार हैः–

| क्र.स. | फल का नाम | किस्म | दूरी |
|---|---|---|---|
| 1. | बेर | गोला, सेव, मुण्डिया, उमरान | 6 X 6 मीटर |
| 2. | अनार | जोधपुर रेड़, जालौर सीडलेस, भगवा (सिंदूरी), सुपर भगवा | 5 X 5 मीटर |
| 3. | लसोड़ा | पुष्कर लोकल | 6 X 6 मीटर |
| 4. | निम्बू | कागजी, बारहमासी, सीडलेस | 6 X 6 मीटर |
| 5. | मॉल्टा/सन्तरा | माल्टा ब्लडरेड, मौसमी, जाफा, किन्नों | 6 X 6 मीटर |
| 6. | खजूर | हलावी, बरही, खुनीजी, जाहिदी, खदरावी, मेडजूल | 8 X 8 मीटर |

सब्जियों में मिर्च, बैंगन, टमाटर की रोपाई की गई क्यारियों में पानी लगावे, खरपतवार निकालने का कार्य करें। कुष्माण्ड कुल की सब्जियों में स्टेकिंग करनी चाहिये। सब्जियों में निराई–गुड़ाई का विशेष ध्यान रखें। अगेती मूली व पालक की बुवाई करें।

Printed and published by Dr. Deepali Dhawan on behalf of Nidesak Prasar Shiksha and Printed at M/s Kishan Enterprises, Magaram Colony, Outside Jassusar Gate, Bikaner and published at Swami Keshwanand Rajasthan Agricultural University, Bikaner, Editor : Prof. Rajesh Kumar Verma.